दक्षिण पूर्व एशिया में लोकतंत्र

परिवर्तनकाल को आकार देने वाले रुझान और कारक

डॉ. टेम्जेनमेरेन एओ

भारतीय वैश्विक परिषद (आईसीडब्ल्यूए) की स्थापना 1943 में सर तेज बहादुर सप्रू और डॉ एच.एन. कुंजरू के नेतृत्व में प्रतिष्ठित बुद्धिजीवियों के समूह द्वारा की गई थी। इसका मुख्य उद्देश्य अंतर्राष्ट्रीय संबंधों पर एक भारतीय परिप्रेक्ष्य बनाना और विदेश नीति के मुद्दों पर ज्ञान और सोच के भंडार के रूप में कार्य करना था। आज परिषद एक आंतरिक संकाय के साथ-साथ बाहरी विशेषज्ञों के माध्यम से नीति अनुसंधान का कार्य करता है। यह नियमित रूप से सम्मेलनों, संगोष्ठियों, गोलमेज चर्चाओं, व्याख्यानों सहित अनेक बौद्धिक गतिविधियां आयोजित करता है एवं कई प्रकार के पुस्तकों का भी प्रकाशन करता है। इसके पास एक समृद्ध पुस्तकालय है। इसकी वेबसाइट सक्रिए है और यह *इंडिया क्वॉर्टर्ली* नाम की पत्रिका का प्रकाशन भी करता है। अंतरराष्ट्रीय मुद्दों पर बेहतर समझ को बढ़ावा देने एवं आपसी सहयोग के क्षेत्र को विकसित करने के लिए आईसीडब्ल्यूए ने अंतरराष्ट्रीय विचारक समूहों (थिंक टैंक्स) और अनुसंधान संस्थानों के साथ 50 से अधिक समझौते किए हैं। परिषद की भारत में प्रमुख अनुसंधान संस्थानों, विचारक समूहों और विश्वविद्यालयों के साथ साझेदारी भी है।

सर्वाधिकार सुरक्षित। कॉपीराइट मालिक की लिखित अनुमति के बिना इस प्रकाशित पुस्तक के किसी भी हिस्से को किसी भी रूप में या किसी भी माध्यम से, इलेक्ट्रॉनिक, यांत्रिक, फोटोकॉपी रिकॉर्डिंग या अन्यथा, पुनः प्रस्तुत, एक पुनर्प्राप्ति प्रणाली में संग्रहीत या प्रेषित नहीं किया जा सकता है।

इस प्रकाशित पुस्तक में तथ्यों एवं विचारों का उत्तरदायित्व विशेष रूप से लेखकों का है और उनकी व्याख्या आवश्यक रूप से भारतीय वैश्विक परिषद, नई दिल्ली के विचारों या नीति को प्रतिबिंबित नहीं करता है।

विषयवस्तु

सारांश	5
परिचय	7
दक्षिणपूर्व एशिया में राजनीतिक परिवर्तन	9
कम्बोडिया	9
इंडोनेशिया	12
मलेशिया	18
म्यांमार	23
फिलीपींस	32

सिंगापुर	38
थाईलैंड	41
दक्षिणपूर्व एशिया में उभरते राजनीतिक रूझान	51
दक्षिणपूर्व एशिया में राजनीतिक विमर्श को आकार देने वाले कारक	54
आंतरिक कारक	55
बाह्य कारक	61
मुखर चीन	61
आतंक और महामारी पर वैश्विक जंग	68
निष्कर्ष	73

सारांश

यह शोधपत्र 1980 के दशक के मध्य से दक्षिण पूर्व एशियाई देशों में लोकतांत्रिक सुधारों की प्रकृति और प्रगति पर एक अध्ययन है। इनमें से कुछ देशों में जहां सफल लोकतांत्रिक परिवर्तन देखा जा रहा है, वहीं कुछ अन्य देशों में लोकतांत्रिक पिछड़ापन और मजबूत राजनीति की वापसी भी हुई है। यह शोधपत्र सात दक्षिणपूर्व एशियाई देशों में उभरते राजनीतिक रुझानों और किस प्रकार मुख्य आंतरिक एवं बाहरी कारक उनकी लोकतांत्रिक प्रक्रिया को आकार दे रहे हैं, की पड़ताल करता है।

संकेतशब्दः लोकतंत्र, दक्षिणपूर्व एशिया, सामाजिक-आर्थिक सुरक्षा, राजनीति, चुनाव।

परिचय

वर्ष 1986 में फिलीपींस में 'पीपुल पावर मूवमेंट' जिसने मार्कोस के बीस साल के शासन को समाप्त कर दिया था, को, एक शांतिपूर्ण क्रांति एवं लोकतंत्र की बहाली के उदाहरण के रूप में पूरे विश्व में सराहा गया। इसके बाद दक्षिण पूर्व एशिया में व्यापक लोकतांत्रिक रुझान देखने को मिले जिसमें 1991 का पेरिस व्यापक शांति समझौता शामिल था, जिसने कम्बोडिया के गृह युद्ध को समाप्त किया और मई 1993 में चुनाव कराए गए; थाईलैंड में 1997 का ऐतिहासिक संविधान; 1998[1] से इंडोनेशिया द्वारा सुधारवाद (लोकतांत्रिक सुधार प्रक्रिया) को अपनाना। ये प्रमुख घटनाएं थी जिन्होंने दक्षिणपूर्व एशिया के राजनीतिक परिदृश्य को बदल दिया, इसे फिलीपींस में फर्डिनेंड मार्कोस, सिंगापुर में ली कुआन यू, मलेशिया में महातिर बिन मोहम्मद और इंडोनेशिया[2] में सुहार्तो के बाद सुकर्णो जैसे 'मजबूत' शासन द्वारा उल्लेखनीय बनाया गया था।

21वीं सदी के आखिर में सबसे नाटकीय राजनीतिक परिवर्तनों में से एक परिवर्तन म्यांमार में हुआ, जिसने 2010 में आधी सदी में अपने यहां पहली बार नागरिक सरकार का बनना देखा। हालांकि, इसके बाद 1 फरवरी

2021[3] में तख्तापलट के बाद सैन्य सरकार की वापसी हो गई। दशकों से दक्षिणपूर्व एशिया के देश जो लोकतांत्रिक परिवर्तनों का हिस्सा थे, ने, राजनीतिक परिवर्तनकाल शासन की एक प्रणाली की ओर गहरा रुझान देखा है जो लोकतांत्रिक सरकार के सबसे आशाजनक रूप से लेकर पूर्ण राजनीतिक अराजकता तक है।

यह शोधपत्र दक्षिणपूर्ण एशिया के सात देशों- कम्बोडिया, इंडोनेशिया, मलेशिया, म्यांमार, फिलीपींस, सिंगापुर और थाईलैंड, में लोकतांत्रिक सुधारों की प्रक्रिया पर किया गया एक अध्ययन है। यह देखते हुए कि सभी सात देश सजातीय नहीं हैं और अपनी राजनीतिक व्यवस्था एवं इसके विकास के संदर्भ में बहुत ही अनोखे हैं, शोधपत्र व्यक्तिगत रूप से उनकी पड़ताल करता है। उभरती हुई राजनीतिक प्रवृत्तियों की जांच कर, शोधपत्र कुछ प्रमुख आंतरिक और बाहरी कारकों का विश्लेषण करता है जो इन देशों में लोकतांत्रिक परिवर्तन की प्रकृति को आकार दे रहे हैं।

दक्षिणपूर्व एशिया में राजनीतिक परिवर्तन

दक्षिणपूर्व एशिया में आज राजनीतिक व्यवस्थाओं की एक विस्तृत श्रृंखला है जिसमें इंडोनेशिया, फिलीपींस जैसे लोकतांत्रिक देशों से लेकर लाओस और वियतनाम जैसे साम्यवादी देशों से लेकर ब्रुनेई की पूर्ण राजशाही तक शामिल है। विकासशील लोकतांत्रिक बदलावों के अध्ययन में, अलग- अलग देशों में कई कारकों की सतत भूमिका के जारी रहने का पता चलता है। यह खंड दक्षिणपूर्व एशिया के सात देशों के राजनीतिक पथ पर केंद्रित है जो लोकतांत्रिक परिवर्तन प्रक्रिया का हिस्सा रहा है।

कम्बोडिया

वर्ष 1985 से 1991 के बीच की अवधि में खमेर रूज के नेतृत्व में कम्बोडिया में गृहयुद्ध जारी रहा। यह अवधि कम्बोडिया देश में परिवर्तन और 1989 में इसकी अर्थव्यवस्था के खुलने की भी रही। कम्बोडिया के चार गुटों के नेताओं- खमेर रूज, बुद्धिस्ट लिबरल डेमोक्रेटिक पार्टी (बीएलडीपी), कम्बोडियन पीपुल्स पार्टी (सीपीपी) और नेशनल यूनाइटेड फ्रंट फॉर एन इंडिपेंडेंट, न्यूट्रल, पीसफुल एंड कोऑपरेटिव कम्बोडिया (एफयूएनसीआईएनपीईसी), ने- और संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के पांच सदस्य देशों एवं अन्य 12 देशों द्वारा 23 अक्टूबर 1991 को पेरिस शांति समझौते पर हस्ताक्षर किए थे। शांति समझौते के तहत कम्बोडिया में एक संयुक्त राष्ट्र परिवर्तनकाल प्राधिकरण (यूनाइटेड नेशनल ट्रांजिशनल अथॉरिटी/ यूएनटीएसी) की स्थापना की भी बात थी। यूएनटीएसी को 1993 में चुनाव कराने तक चार गुटों के सशस्त्र सैनिकों को अलग करने, उन्हें निरस्त्र करने एवं उनकी निगरानी करने, युद्धविराम लागू करने एवं हथियारों पर रोक लागने, सरकार के प्रमुख पहलुओं (रक्षा, विदेश मामले, सार्वजनिक सुरक्षा और वित्त एवं सूचना) की व्यवस्था तक और मानवाधिकारों का पालन सुनिश्चित करने का कार्य सौंपा गया था।

इसके अलावा, परिवर्तनकालीन अवधि के लिए एक सर्वोच्च राष्ट्रीय परिषद (एसएनसी) बनाई गई एवं प्रिंस नोरोडोम सिहानोक की अध्यक्षता में तटस्थ केंद्रीय प्राधिकरण के रूप में कार्य किया गया। एसएनसी में 12 सदस्य थे जिनमें से छह सीपीपी से, दो फनसिनपेक से, दो बीएलडीपी से और दो खमरे रूज से थे। यूएनटीएसी यासुस्की आकाशी के नेतृत्व में अनिवार्य कार्यों को लागू करने के लिए 1992 में कम्बोडिया आया था। यह चुनाव कराने में तो सफल रहा लेकिन सभी गुटों को अलग करने एवं निरस्त्र करने का काम पूरा नहीं कर सका। संविधान सभा के लिए चुनाव, जिसे नेशनल असेंबली में बदल दिया गया था, मई 1993 में आयोजित किया गया था और इस चुनाव[4] में 90 प्रतिशत पंजीकृत मतदाताओं ने हिस्सा लिया था।

राजभक्त एफयूएनसीआईएनपीईसी पार्टी को 45 प्रतिशत, सीपीपी को 38 प्रतिशत और बीएलडीपी को चार प्रतिशत वोट मिले। चूंकि 120 सदस्यों वाले सदन में किसी भी दल को पूर्ण बहुमत नहीं मिला था, इसलिए गठबंधन सरकार बनाई गई जिसका नेतृत्व पहले प्रधानमंत्री के रूप में प्रिंस नोरोडोम रणरिद्ध और दूसरे प्रधानमंत्री के रूप में हुन सेन ने की। नेशनल असेंबली जिसने एक उदार लोकतांत्रिक संस्था को अपनाया और नई गठबंधन सरकार को मंजूरी दी, वह चार राजनीतिक दलों- खमेर रूज, बीएलडीपी, सीपीपी और एफयूएनसीआईएनपीईसी से बनी थी। दो प्रमुखों वाली नई गठबंधन सरकार के अपनी कमियां और खामियां थीं लेकिन शायद उस समय की परिस्थितियों में देश को सबसे अच्छा यही मिल सकता था। व्यवस्था ने क्षेत्रीय अलगाव के सीपीपी खतरे पर काबू पा लिया और कम-से-कम 1990 के दशक के मध्य[5] तक राजनीतिक स्थिरता बनाए रखी। संविधान सभा द्वारा अनुसमर्थन के बाद नोरोडोम सिहानोक को राज्य का नया प्रमुख घोषित किया गया जिन्होंने 24 सितंबर 1993 को नए संविधान पर हस्ताक्षर किया था। कम्बोडिया के संविधान में 139 अनुच्छेद है जो विधायी, कार्यकारी और न्यायिक वर्गों के अधिकारों के पृथक्करण को परिभाषित करते हैं। इसमें मानवाधिकारों की एक लंबी सूची भी है। संविधान ने संवैधानिक राजतंत्र की एक प्रणाली दी है जिसके अनुसार राजा संविधान के अनुसार शासन करेगा। संविधान में उदार लोकतंत्र, बहुलवाद और देश को स्थायी रूप से तटस्थ एवं गुटनिरपेक्ष रहने के सिद्धांतों को शामिल किया गया है। इसके अलावा, राजा का चुनाव "सिंहासन की शाही परिषद" द्वारा किया जाना था। इस परिषद में नेशनल असेंबली के अध्यक्ष, पीएम, नेशनल असेंबली के पहले और दूसरे उपाध्यक्ष एवं महानिकाय और थम्मायुत के आदेशों के प्रमुख सोमदेक भी शामिल थे। राजा के पास सिंहासन का उत्तराधिकारी नियुक्त करने का अधिकार नहीं था और वह केवल संवैधानिक प्रमुख बने रहेंगे। विधायिका 120 सदस्यों वाली नेशनल असेंबली वाली एक सदन है एवं यह नियमों और विनियमों[6] को बनाने एवं उनकी समीक्षा करने वाली एकमात्र संस्था है।

इन नए घटनाक्रमों के बावदजूद, कंबोडियाई लोकतंत्र चुनावी दायरे में काफी हद तक असमेकित बना हुआ है; हुन सेन के नेतृत्व में सीपीपी ने सत्ता को मजबूत करने का काम किया। हुन सेन ने पहले तो अन्य गठबंधन सहयोगियों को कमजोर बनाने के लिए प्रिंस नोरोडम रणरिद्ध के साथ काम करते हुए, अपने संयुक्त प्रयास में, सत्ता को संस्थागत बनाने की बजाए निजीकरण की मांग की। जैसे ही राजनीतिक विरोध कमजोर पड़ा, हुन सेन ने एफयूएनसीआईएनपीईसी को कमजोर करने की अगली रणनीति अपनानी शुरू कर दी। जुलाई 1997 में लोकतांत्रीकरण की प्रक्रिया तब टूट गई जब हुन सेन ने अपने गठबंध के मुख्य सहयोगी प्रिंस रणरिद्ध को हटाकर हिंसक तख्तापलट को अंजाम दिया।

प्रिंस रणरिद्ध को नए प्रधानमंत्री के पद से अपदस्थ किए जाने के बाद एफयूएनसीआईएनपीईसी से उंग हुओट को प्रधानमंत्री बनाया गया था, हालांकि हुन सेन प्रभारी बने रहे। हालांकि नियमित चुनाव होते रहने से राजनीतिक स्थिरता बढ़ी थी, ऐसा लगता है कि लोकतंत्र ने निरंकुश राजनीति का मार्ग प्रशस्त कर दिया था। सीपीपी भी आगामी चुनावों में अधिक सीटें जीतती रही और कम्बोडिया को एक वर्चस्ववादी पार्टी प्रणाली[7] की ओर ले गई। जुलाई 2018 में हुए पिछले आम चुनावों में, एकमात्र व्यवहार्य विपक्षी पार्टी कम्बोडिया नेशनल रेस्क्यू पार्टी (सीएनआरपी) के कारण सीपीपी ने नेशनल असेंबली की सभी 125 सीटों पर जीत हासिल की, जिसे सुप्रीम कोर्ट ने मनमाने फैसले[8] के जरिए भंग कर दिया था। 23 जुलाई 2023 से कम्बोडिया में नियमित चुनाव हो रहे हैं, सातवें नेशनल असेंबली चुनाव के लिए निर्धारित किया जा रहा है, कुछ पर्यवेक्षकों का तर्क है कि इसकी राजनीतिक प्रणाली की प्रकृति एकल प्रमुख पार्टी के उदय के साथ अधिक दमनकारी हो गई है।

इंडोनेशिया

इंडोनेशिया आसियान में प्रमुख क्षेत्रीय शक्ति के रूप में उभरा है, और यह पूर्वी एशिया और प्रशांत क्षेत्र का महत्वपूर्ण देश है। वर्ष 1945 में स्वयं को स्वतंत्र राष्ट्र घोषित करने के बाद से इसके नेता सुकर्णो और मोहम्मद हट्टा ने सरकार की प्रणाली के रूप में लोकतंत्र का समर्थन किया। देश के 1945 के संविधान ने गणतंत्र के रूप में एकात्मक राष्ट्र प्रदान किया और जबकि यह कार्यपालिका की ओर अग्रसर था, इसने लोकतंत्र के कुछ महत्वपूर्ण बुनियादी सिद्धांतों का भी सम्मान किया। इसकी प्रस्तावना ने मानवतावाद, परामर्श और सामाजिक न्याय पर जोर दिया। संविधान के तहत, संप्रभुता लोगों के हाथों में होती है, जिसका प्रतिनिधित्व पीपुल्स रिप्रेजेंटेटिव काउंसिल (दीवान पेरवाकिलन राक्यत/ डीपीआर) और पीपुल्स कंसल्टेटिव असेंबली (एमपीआर) दोनों द्वारा किया जाता है। इसके अलावा, संविधान ने बहुमत के शासन, शक्तियों के पृथक्ककरण और धर्म की स्वतंत्रता के सिद्धांतों को निर्धारित किया।[10] दुनिया का सबसे बड़ा मुस्लिम राष्ट्र होने के नाते इंडोनेशिया को कोई भी इस्लाम और राजनीति के बीच घनिष्ठ संबंध मान सकता है। सुकर्णो ने तर्क दिया कि यदि नया राष्ट्र 'अल्लाह में भरोसा' पर आधारित होगा और यह न तो इस्लामिक होगा और न ही धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र होगा बल्कि एक 'धार्मिक' राष्ट्र होगा। इसलिए, इंडोनेशिया में इस्लाम समेत सभी धर्म अपने धार्मिक दायित्वों का पालन करने को स्वतंत्र हैं।[11] इसके संस्थापक द्वारा स्थापना के समय से ही इंडोनेशिया को धर्म और राष्ट्र के बीच संतुलन बनाने हेतु गणतंत्र के रूप में सक्षम बनाया। हालांकि इंडोनेशिया की आबादी का कुछ वर्ग इस्लामिक शरीयत लागू करना चाहता है, सरकार सुकर्णो के समय से लगातार अपने शासन के संदर्भ में धर्मनिरपेक्षता का पालन कर रही है। सुकर्णो और सुहार्तो के अधीन, राष्ट्र की गैर-धार्मिक प्रकृति एवं इसकी नीतियों पर पांच सिद्धांतों या पंचसिला के पालन पर जोर दिया गया है जिसमें पांच सिद्धांतों में एक सिद्धांत 'एक ईश्वर में विश्वास' का भी है।[12]

पंचसिला के राष्ट्र विचारधारा के पांच सिद्धांतों में से एक में लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व भी था जिसे जनवरी 1946 में आम चुनाव कराने की योजना से मजबूत किया गया था। सरकार ने, 1945 में घोषणापत्र एक्स (Declaration X) के मुद्दे के जरिए जनता तो राजनीतिक दल बनाने के लिए प्रेरित किया। दुर्भाग्य से चुनाव नहीं हो सके क्योंकि डच उपनिवेशवाद से इंडोनेशिया की स्वतंत्रता को खतरा था; एक संघर्ष जो दिसंबर 1949 में नीदरलैंड द्वारा इसकी संप्रभुता को स्वीकार करने के बाद समाप्त हुआ। इंडोनेशिया ने 29 सितंबर और 15 दिसंबर 1955 को आम चुनाव कराए जिसमें 34 राजनीतिक दलों और स्वतंत्र उम्मीदवारों ने डीपीआर और एमपीआर के लिए चुनाव लड़ा। हालांकि चुनाव स्वतंत्र और निष्पक्ष थे, मार्च 1957 तक न तो सरकार और न ही संविधान सभा अच्छा प्रदर्शन कर पाई। कम-से-कम आठ कैबिनेट या सरकारें बदलीं क्योंकि सरकार को नए गणराज्य द्वारा सामना की जाने वाली सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं पर ध्यान केंद्रित करने के बजाए राष्ट्रीय एकता के मुदद् से निपटना पड़ा। सुकर्णो के नेतत्व वाले लोकतंत्र (1957-65) के तहत, 1959 में फरमान जारी किए गए जिन्होंने राष्ट्र की विचारधारा के रूप में पंचसिला की स्थापना की, 1945 के संविधान की पुनर्स्थापना हुई और संविधान सभा को भंग कर दिया गया। वर्ष 1945 के संविधान ने मजबूत कार्यकारी शक्तियों की स्थापना की थी जिसके कारण इंडोनेशिया में सुकर्णो और सेना प्रमुख खिलाड़ी के रूप में उभरे। 30 सितंबर 1965 को मेजर जनरल सुहार्तो के नेतृत्व में सैन्य तथ्तापलट के साथ सुकर्णो का शासन समाप्त हुआ। सुहार्तो के नए आदेश (1966- 1998) से सरकार ने लिबरल डेमोक्रेसी (1950-57) और गाइडेड डेमोक्रेसी (1957-66) दोनों को खारिज कर दिया। सुहार्तो के अधीन लोकतंत्र को मजबूत बनाने की बजाए स्थिरता लाने के उद्देश्य से, राजनीतिक प्रतिस्पर्धा को हतोत्साहित किया गया और उदार आर्थिक नीति को अपनाया गया। अपने अधिनायकवादी स्वभाव को छिपाने के लिए, नई सरकार ने 1971, 1977, 1982, 1987,

1992, और 1997 में, नियमित रूप से संसदीय चुनाव कराए; जिसमें सरकार की पार्टी, गोलकर, ने हर चुनाव जीता। इंडोनेशिया के भीतर और बाहर असंतोष लगातार बढ़ रहा था, सुहार्तो की सरकार को हटाए गए सुकर्णो सरकार के जैसे ही अधिनायकवादी के रूप में देखा। इसके अलावा, एशियाई वित्तीय संकट का इंडोनेशिया की अर्थव्यवस्था पर बहुत गंभीर प्रभाव पड़ा, यह 18 प्रतिशत तक संकुचित हुआ जिससे देश की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक समस्याओं का पता चलता है और इन कारणों ने सुहार्तो को 21 मई 1998 को इस्तीफा देने एवं उपराष्ट्रपति बखरुद्दीन जुसूफ हबीबी को सत्ता सौंपने पर विवश किया।[13]

सुहार्तो सरकार के कार्यकाल के दौरान, 1985 में पांच राजनीतिक कानून पेश किए गए थे। व्यापक रूप से न्यू ऑर्डर की कानूनी आधारशिला के रूप में माने जाने वाले इन कानूनों ने किसी भी विपक्षी पार्टी के लिए सत्ता हासिल करना असंभव बना दिया। 21 मई 1998 को सुहार्तो का सत्ता से हटाया जाना और राष्ट्रपति हबीबी के अधीन अंतरिम सरकार का बनाया जाना, को, जल्द चुनाव कराए जाने के लिए सुधारवादी आंदोलन के जबरदस्त दबाव के रूप में देखा गया। राष्ट्रपति हबीबी ने 1985 के राजनीतिक कानूनों को संशोधित करने को प्राथमिकता दी ताकि चुनाव की एक बेहतर स्वीकार्य प्रणाली सुनिश्चित की जा सके और वर्तमान 1945 के संविधान में प्रतिनिधित्व को समायोजित किया जा सके।[14] उन्होंने चुनाव के बाद संविधान में संशोधन करने, केंद्र सरकार से क्षेत्रों को सत्ता हस्तांतरित करने और यहां तक कि पापुआ, आचे और पूर्वी तिमोर (1999 में पूर्वी तिमोर को इंडोनेशिया से अंततः अलग कर दिया) जैसे युद्धग्रस्त क्षेत्रों को स्वायत्तता प्रदान करने का वादा किया। हबीबी सरकार ने उस समय की उच्च राष्ट्रीय संस्था, पीपुल्स कंसल्टेटिव असेंबली या एमपीआर, जिसके दो तिहाई सदस्य डीपीआर में थे, द्वारा नियुक्ति की पूर्व प्रणाली की बजाए, प्रत्यक्ष राष्ट्रपति चुनाव को अपनाने के लिए कदम उठाया।[15]

सुधारवादी आंदोलन के परिणामस्वरूप संविधान में महत्वपूर्ण संशोधन हुए, जिसने सरकार की सभी तीन शाखाओं को प्रभावित किया, महत्वपूर्ण मानवाधिकार प्रावधानों को शामिल किया और पहली बार संविधान में 'चुनाव' की अवधारणा को शामिल किया।[16] राजनीतिक दलों, आम चुनाव और संसद की संरचना से संबंधित तीन राजनीतिक कानूनों के साथ 28 जनवरी 1999 को इंडोनेशिया की संसद द्वारा अंगीकार किए जाने के बाद 7 जून 1999 को चुनाव कराने का मार्ग प्रशस्त हुआ। इंडोनेशिया की संसद में डीपीआर और रिजनल रिप्रेजेंटेटिव काउंसिल (दीवान पेरवाकिलन डेराह/ डीपीडी) हैं, दोनों में चुनाव पांच साल की अवधि के लिए होता है। डीपीआर 1945 के संविधान द्वारा स्थापित वर्तमान निकाय है जबकि डीपीडी का गठन 2001 में संविधान में संशोधन के माध्यम से द्विसदनीयता के लिए उठाए गए कदम के रूप में किया गया था। डीपीआर में कुल 560 प्रतिनिधि जबकि डीपीडी में 132 प्रतिनिधि हैं।[17]

जून 1999 में, संसदीय चुनाव हुए जिसमें इंडोनेशिया की डेमोक्रेटिक पार्टी ऑफ स्ट्रगल ने 33 प्रतिशत, गोलकर ने 22 प्रतिशत और नेशनल अवेकनिंग पार्टी ने 12 प्रतिशत वोट जीते और अब्दुर्रहमान वाहिद इंडोनेशिया के चौथे राष्ट्रपति बने। जुलाई 2002 में एमपीआर ने 1945 के संविधान के प्रमुख सुधार किए जिससे राष्ट्रपति पद के लिए सीधे निर्वाचन का मार्ग प्रशस्त हुआ और संसद से सभी नियुक्त सीटों को हटा दिया। राष्ट्रपति और क्षेत्रीय नेताओं (गवर्नर और मेयर/रीजेन्ट) के लिए पहले प्रत्यक्ष चुनाव क्रमशः 2004 और 2005 में हुए थे। राष्ट्रपति सुसिलो बंबांग युधोयोनो ने, 2004-09 के कार्यकाल के लिए, राष्ट्रपति के लिए हुए प्रत्यक्ष चुनावों में वर्तमान मेगावती को हरा कर निर्वाचित हुए। यहां तक कि उन्होंने, 2009-14 में, राष्ट्रपति के अपने दूसरे और अंतिम कार्यकाल को सफलतापूर्वक पूरा किया।[18] हालांकि इंडोनेशिया सुसिलो बंबांग युधोयोनो के राष्ट्रपति कार्यकाल (2004-2014) के अधिकांश समय में शांतिपूर्ण रहा, उनका प्रशासन भ्रष्टाचार और घोटालों से त्रस्त था, जिसके कारण लोगों का सरकार से व्यापक मोहभंग हुआ। इस मोहभंग ने इंडोनेशिया का राष्ट्रपति के रूप

में जकार्ता के पूर्व गवर्नर जोको विडोडो (जोकोवी के नाम से प्रसिद्ध) के 2014 के चुनाव में भूमिका निभाई। हालांकि जोकोवी ने स्पष्ट रूप से पूर्व जनरल प्रभावो सुबियांतो को हराया था, चुनाव गहन विभाजनकारी थी जिसमें प्रभावो ने बड़े पैमाने पर मतदान में धोखाधड़ी किए जाने का आरोप लगाया था।[19]

1945 के संविधान में भी एक बार शक्तिशाली, पार्टी-केंद्रित राष्ट्रपति को लोकप्रिय चुनाव के अधीन बनाने हेतु संशोधन किया गया था और इसे भी दो पंचवर्षीय कार्यकाल तक सीमित कर दिया गया था। चुनाव हेतु राष्ट्रपति का नामांकन डीपीआर में पार्टियों के समर्थन का प्रदर्शन करने वाले उम्मीदवारों द्वारा निर्धारित किया जाता है। राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के लिए उम्मीदवार टीम को यह दिखाने की जरूरत है कि उनके पास वर्तमान डीपीआर में कम-से-कम 20 प्रतिशत सीटों पर कमांडिंग पार्टियों का समर्थन है या पिछले चुनाव में उनकी पार्टियों ने 25 प्रतिशत वोट हासिल करने में सफलता पाई थी। राष्ट्रपति चुनाव जीतने के लिए उम्मीदवार को 50 प्रतिशत से अधिक लोकमत प्राप्त करना चाहिए। यदि पहले दौर में एक भी उम्मीदवार 50 प्रतिशत वोट हासिल नहीं कर पाता तो शीर्ष दो उम्मीदवारों के बीच दूसरे दौर में आमने- सामने की प्रतिस्पर्धा होती है।[20] अप्रैल 2019 में हुए राष्ट्रीय चुनावों में, मतदाताओं ने पहली बार, राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के साथ डीपीआर, डीपीडी और क्षेत्रीय विधान परिषद (डीपीआरडी) के सदस्यों को चुना।[21] श्री जोको विडोडो ने 20 अक्टूबर 2019 को, अपने प्रतिद्वंद्वी श्री प्रभावो सुबियांतो द्वारा प्राप्त 44.5 प्रतिशत मतों की तुलना में 55.5 प्रतिशत मत जीतने के बाद, दूसरी बार इंडोनेशिया के दूसरे राष्ट्रपति की शपथ ली थी।[22]

1955- 57 की कॉन्सियुआनी (संविधान सभा) की बहस में और 1999-2001 में लोकतांत्रिक परिवर्तन की शुरुआत में संवैधानिक बहस में, यह विचार की इंडोनेशिया एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र है, को संवैधानिक रूप से शामिल किया गया और इसे व्यापक रूप से स्वीकार भी किया गया था। इसके अलावा, इंडोनेशिया के सबसे बड़े इस्लामी नागरिक समाज के संगठनों ने लोकतांत्रिक समर्थक नजरिए और आंदोलनों को बढ़ावा देने में एक रचनात्मक भूमिका निभाना जारी रखा, जिसने गणतंत्र के समेकन को सक्षम बनाया।[23] हालांकि इंडोनेशिया ने अपना लोकतांत्रिक समेकन जारी रखा है लेकिन इसके इस्लामिक राष्ट्र बनने और अपने नागरिकों पर शरीयत लागू करने संबंधी भावी चिंताएं भी हैं। इंडोनेशिया के लोकतांत्रिक परिवर्तन के इस नए चरण में, इंडोनेशिया में इस्लाम का निरंतर सांस्कृतिक पुनरुत्थान प्रतीत होता है।[24]

मलेशिया

मलेशिया मलय भाषी लोगों, जिनकी संख्या प्रायद्वीप पर सबसे अधिक थी, के 'मलय' शब्द से लिया गया है। उन्नीसवीं और बीसवीं सदी के आरंभ में अलग- अलग मलय राष्ट्र ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के अधीन आए, और 1957 में स्वतंत्रता प्राप्त करने तक ब्रिटिश शासन के अधीन रहे। टुंकू अब्दुल रहमान, जो मई 1961 में मलय संघ के पूर्व और पहले मुख्यमंत्री ने, संयुक्त 'मलेशिया' बनाने के लिए सिंगापुर (जो अभी तक ब्रिटिश उपनिवेश था) और उत्तरी बोर्नियो के ब्रिटिश नियंत्रित तीन क्षेत्र- सारावाक, सबा और ब्रुनेई, को, वर्तमान फेडरेशन ऑफ मलय में शामिल करने का प्रस्ताव रखा। फेडरेशन ऑफ मलेशिया का गठन 16 सितंबर 1963 को हुआ था जिसने फेडरेशन और मलय, सिंगापुर और उत्तरी बोर्नियो में ब्रिटिश संरक्षित राज्यों सारावाक और सबा को एक साथ लाया था। ब्रिटिश उत्तरी बोर्नियो और सारावाक के बीच स्थित ब्रुनेई राज्य ने मलेशिया में शामिल होने से इनकार कर दिया जबकि 1965 में सिंगापुर को महासंघ से निष्कासित कर दिया गया था।[25]

मलेशिया में नए महासंघ की स्थापना ने आंतरिक राजनीतिक संतुलन को प्रभावित किया जो मलय प्रायद्वीप के स्वदेशी मुस्लिम समुदाय के प्रभुत्व की रक्षा करना चाहता था। संघ से सिंगापुर के निष्कासन के कारणों में से एक कारण यह भी था जिसमें प्रवासी मूल के बड़े आर्थिक रूप से मजबूत चीनी मूल के थे और चुनावी

जनसांख्यिकी को प्रभावित कर सकते थे। इसलिए, जब सिंगापुर की सत्तारूढ़ पीपल्स एक्शन पार्टी (पीएपी) ने 1964 में संयुक्त मलय राष्ट्रीय संगठन (यूनाइटेड मलएज नेशनल ऑर्गेनाइजेशन- यूएमएनओ), को चुनौती देने के लिए मलेशियाई चुनावों में प्रवेश किया, तो इसे मलय- मुस्लिम राजनीतिक प्रभुत्व के लिए एक चुनौती के रूप में देखा गया और इसने महासंघ से इसे निष्कासन की नींव रखी। महासंघ में मलय- मुस्लिम राजनीतिक प्रभुत्व भी एक संवैधानिक राजतंत्र का प्रतीक है जिसका पदाधिकारी, पांच वर्ष के आधार पर, मलय प्रायद्वीप के राज्यों के सुल्तानों और शासकों से चुना जाता है। मलेशिया के पहले प्रधानमंत्री टुंकू अब्दुल रहमान द्वारा मलेशिया के एक संयुक्त महासंघ की स्थापना की पहल एक प्रकार से मलय समुदाय की प्रमुख राजनीतिक स्थिति प्राप्त करने के लिए थी, जिसका प्रतिनिधित्व उनके राजनीतिक दल यूएमएनओ ने किया था। मलेशियाई राजनीति का मॉडल अपने मुस्लिम घटक के नेतृत्व वाली अंतर-सांप्रदायिक गठबंधन सरकार पर आधारित है। यूएमएनओ, जो प्रमुख दल बना रहा, को राजनीतिक कमजोरियों को दूर करने में मदद करने के लिए अपनी इस्लामी पहचान को मजबूत करने के लिए विवश होना पड़ा, जो अन्य गैर- मलय दलों के साथ घनिष्ठ सहयोग के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई और जो सत्तारूढ़ गठबंधन का हिस्सा थे।[26]

मलेशियाई सरकार लोकतांत्रिक और अधिनायकवादी, दोनों विशेषताओं का प्रतीक है और इसे 'अर्ध-लोकतांत्रिक', 'अनुदार लोकतंत्र', 'सांख्यिकीय लोकतांत्रिक', 'दमनकारी-उत्तरदायी', 'अनुदार लोकतंत्र' और इसी प्रकार के शब्दों से वर्णित किया गया है। बरिसन नैशनल (बीएन) गठबंधन- जिसमें यूएमएनओ संस्थापक सदस्य था- मलेशिया की स्वतंत्रता के बाद से सत्ता में है और सभी प्रधानमंत्री यूएमएनओ के सदस्य रहे हैं। बीएन में यूएमएनओ का प्रभुत्व इस हद तक महत्वपूर्ण बना रहा कि अन्य दल अनिवार्य रूप से गठबंधन में कनिष्ठ भागीदार बन कर रह गए। प्रधानमंत्री महाथिर मोहम्मद के नेतृत्व में राजनीतिक वर्चस्व और गहरा हुआ। वर्ष 1981 में महाथिर सरकार सत्ता में आई, तब उन्हें एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था विरासत में मिली जहां संस्थाएं एवं चुनावी प्रणाली पहले से ही लोकतांत्रिक रूप से कमजोर थीं और कार्यकारी शाखा पहले से ही संसद, न्यायपालिका और मीडिया पर हावी थीं। अपने पूर्ववर्तियों की तरह, महाथिर दमनकारी- उत्तरदायी दृष्टिकोण के जरिए सत्तावादी सरकार को बनाए रखने हेतु प्रभावी राजतंत्र पर विश्वास कर सकते थे।[27] इसके अलावा, उनके शासन के तहत मलेशिया एक मजबूत आर्थिक विकास का गवाह बना जिसे विनिर्माण, तेल और गैस एवं रोपण-कृषि में निर्यात-आधारित विकास में विविधीकरण के माध्यम से समर्थन मिला था। इसने 1970 और 1980 के दशक के दौरान मलेशियाई राजनीति की विशेषता वाले अंतर-जातीय संघर्षों और विवादों को कम करने में मदद की और एक बहुल समाज में राजनीतिक स्थिरता के लिए मजबूत भौतिक आधार प्रदान किया। इस प्रकार की स्थिरता ने एक अधिक सत्तावादी सरकार को भी सक्षम किया जिसने संसदीय लोकतंत्र से जुड़े राजनीतिक नियंत्रण और संतुलन प्रदान करने के लिए आवश्यक स्वतंत्र संस्थानों की भूमिका पर अंकुश लगाया। सत्तारूढ़ गठबंधन सरकार के इस बढ़ते अधिनायकवाद ने प्रमुख मलय विपक्षी पार्टीः पार्टी इस्लाम से- मलेशिया (पीएएस) को नई राजनीतिक संस्थाओं के उदय के साथ-साथ बहुत लाभ कमाने का अवसर प्रदान किया।[28]

मलेशिया में 8 मार्च 2008 को हुए 12वें आम चुनाव में विपक्षी दलों ने 222 सीटों में से 82 सीटों पर जीत हासिल की, इससे बीएन दो-तिहाई बहुमत से तो वंचित हुआ ही, साथ ही पांच राज्यों की सरकार से भी हाथ धोना पड़ा। नतीजों ने मलेशियाई राजनीति में यूएमएनओ के निरंतर प्रभुत्व के लिए संकट को उजागर किया क्योंकि महत्वपूर्ण एक तिहाई मलय मतदाताओं ने अनवर इब्राहिम द्वारा बनाए गए विपक्षी पाकतन राक्यत (पीआर या नागरिक गठबंधन) गठबंधन का समर्थन किया था।[29]

मलेशिया में मई 2018 में घोषित 14वें आम चुनाव का परिणाम बहुत आश्चर्यजनक था। मलेशिया की स्वतंत्रता के बाद पहली बार यूएमएनओ के नेतृत्व वाला सत्तारूढ़ बीएन गठबंधन हार गया था। डॉ महाथिर

मोहम्मद ने 2013 के आम चुनावों के बाद गठित पाकतन हरपन (पीएच) विपक्षी गठनबंधन को जीत दिलाई। पीएच में वामपंथी और वाम-केंद्रित दल थे जिनमें पीपुल्स जस्टिस पार्टी (पीकेआर), बहु-जातीय डेमोक्रेटिक एक्शन पार्टी (डीएपी), प्रगतिशील इस्लामिक नेशनल ट्रस्ट पार्टी (एएमएएनएएच) और जातीय अनन्य मलेशियाई यूनाइटेड इंडीजिनस पार्टी (पीपीबीएम या बीईआरएसएटीयू) थी।[30] डॉ. महाथिर, जो पीएच के अध्यक्ष थे, मलेशिया के 7वें प्रधानमंत्री नियुक्त किए गए थे जबकि इसके अध्यक्ष वान अज़ीज़ाह वान इस्माइल को मलेशिया के 12वें उप-प्रधानमंत्री के रूप में नियुक्त किया गया था। हालांकि, 24 फरवरी 2020 को महाथिर ने पीएम पद से इस्तीफा दे दिया और उनके साथ उनकी पार्टी पीपीबीएम और पीकेआर पीएच से अलग हो गई; इसके कारण संसद में गठबंधन ने बहुमत खो दिया।[31] इसके कारण फरवरी 2020 में पीपीबीएम, मलेशियन इस्लामिक पार्टी, होमलैंड सॉलिडेरिटी पार्टी, सबा प्रोग्रेसिव पार्टी और पार्टी गेराकन राक्यत मलेशिया से बना गठनबंधन पेरिकतन नैशनल (पीएन) का गठन हुआ। इसके अध्यक्ष मुहीदीन यासिन को मलेशिया के 8वें प्रधानमंत्री के रूप में नियुक्त किया गया था और जबकि इनके पास संसद में बहुमत नहीं था, इसे यूएमएनओ का बाहर से समर्थन प्राप्त था।[32]

मुहीदीन यासिन का कार्यकाल शुरू से ही अस्थिर था क्योंकि सत्तारूढ़ गठबंधन के पास संसद में एक कमजोर बहुमत था। इससे अक्सर इसकी वैधता पर सवाल उठने लगे। इसके अलावा, सार्वजनिक स्वास्थ्य पर गहरे प्रभाव के साथ कोविड-19 महामारी के आरंभ और देश भर में महसूस किए गए आर्थिक संकट ने एक संवैधानिक संकट की अनिवार्यता को सुनिश्चित किया। 8 जुलाई 2021 को यूएमएनओ के अध्यक्ष अहमद ज़ाहिद हमीदी ने सरकार की महामारी की प्रतिक्रिया से निपटने पर देश में बढ़ते गुस्से को दर्शाते हुए कहा कि पार्टी अपना समर्थन वापस लेगी और एक अंतरिम पीएम बनाने का आह्वान किया।[33] कई हफ्तों के विरोध, बढ़ते दबाव और सरकार से यूएमएनओ के ग्यारह सांसदों के समर्थन वापस लेने के बाद 3 अगस्त 2021 को पीएम यासिन- अठारह माह तक पद पर बने रहने के बाद- को पद छोड़ना पड़ा क्योंकि सत्तारूढ़ पीएन गठबंधन ने अपना बहुमत खो दिया था। 16 अगस्त 2021 को पीएम मुहीदीन यासिन ने मलेशियाई राजा सुल्तान अब्दुल्ला अहमद शाह को अपना इस्तीफा सौंप दिया।[34] करीब एक सप्ताह की राजनीतिक उथल-पुथल के बाद, 21 अगस्त 2021 को यूएमएनओ के उपाध्यक्ष श्री इस्माइल साबरी याकूब ने मलेशिया के 9वें प्रधानमंत्री के रूप में शपथ ली। इस्माइल साबरी याकूब को संसद में 114 सांसदों का समर्थन प्राप्त था और जब उन्होंने पीएन गठबंधन का नेतृत्व किया, मुहीदीन यासिन ने पीएम के रूप में पदभार संभाला तो यूएमएनओ पार्टी की सत्ता में वापसी भी हुई; देश की स्वतंत्रता के बाद पहली बार आम चुनाव हारने के तीन साल बाद।[35]

म्यांमार

दक्षिणपूर्व एशिया के देशों में जहां आज साम्यवादी राष्ट्रों के साथ- साथ लोकतांत्रिक राष्ट्र भी हैं- जिन्होंने शीत युद्ध के बाद की अवधि में लोकतंत्र की विशेषताओं को भी अपनाया है- म्यांमार का अध्ययन दिलचस्प है। सैन्य तानाशाह के अधीन रहने से लेकर नवंबर 2015 में स्वतंत्र चुनाव कराने एवं फरवरी 2021 में सैन्य शासन की वापसी तक म्यांमार में पिछले दो दशकों में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। 1962-74, 1988-2011 और फरवरी 2021 से लेकर आज तक म्यांमार प्रत्यक्ष रूप से सैन्य नियंत्रण में और अप्रत्यक्ष रूप से सेना चुने हुए चैनल- बर्मा सोशलिस्ट प्रोग्राम पार्टी या बीएसपीपी (1974- 1988), के नियंत्रण में रहा। वर्ष 1948 में म्यांमार की स्वतंत्रता के बाद से, नागरिक सरकार (1948-1962) पर सेना के गहरे प्रभाव के साथ सेना का मजबूत नियंत्रण भी रहा। इसने देश को राजनीतिक और जातीय विद्रोहों के कारण विघटन से बचाने में मदद भी की, जहां देश पर सेना का अठारह महीने (1958-1960) तक देश पर प्रत्यक्ष प्रशासनिक नियंत्रण था। म्यांमार के सशस्त्र बल, जिन्हें ततमादॉ भी कहा जाता है, नागरिक नेताओं का सम्मान कम करते थे क्योंकि ये उन्हें भ्रष्ट,

असमर्थ, विकासात्मक कौशल या दूरदर्शिता की कमी वाले, देशद्रोही और विशेष जातीय या आर्थिक हितों के लिए देश की एकता का त्याग करने वालों के रूप में देखते थे। इसलिए, सेना ने प्रणालियों का एक सेट तैयार किया जो देश की सत्ता और उसकी स्वायत्तता पर प्रभावी नियंत्रण- दोनों की निरंतरता को सुनिश्चित करे।[36]

ततमादॉ सिद्धांत इंडोनेशिया के द्विफुंगसी (सशस्त्र बलों की दोहरी भूमिका) के सिद्धांत के जैसा ही है- जिसे मई 1998 में राष्ट्रपति सुहार्तो के इस्तीफे के बाद भंग कर दिया गया था क्योंकि इंडोनेशिया के लोगों ने संसदीय प्रणाली को प्राथमिकता दी थी। म्यांमार में भी ततमादॉ सिद्धांत का नेशनल लीग फॉर डेमोक्रेसी (एनएलडी) के साथ विवाद चल रहा है, वह इसे खत्म करने के लिए संघर्ष कर रहा है और लोकतंत्र की बहाली की दिशा में काम कर रहा है। जब जनरल ने विन ने 1988 में छात्र-नीत प्रदर्शन के कारण इस्तीफा दे दिया और माउंग माउंग ने उनकी जगह ले ली तो आम सहमति ततमादॉ को समाप्त करने की थी। हालांकि माउंग माउंग, जिसे पीपुल्स असेंबली द्वारा राष्ट्रपति और बीएसपीपी का अध्यक्ष घोषित किया गया था, सत्ता में बने नहीं रह सके और जनरल साउ माउंग ने तख्तापलट के जरिए स्टेट लॉ एंड ऑर्डर रेस्टोरेशन काउंसिल (एसएलओआरसी) के नाम पर सत्ता संभाली। उनके नेतृत्व में, 27 मई 1990 को आम चुनाव कराए गए। स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव में, एनएलडी के नेतृत्व में लोकतांत्रिक शक्तियों को 485 सीटों में से 392 सीटें मिलीं, जबकि सेना की नेशनल यूनिटी पार्टी ने 10 सीटें जीतीं। नतीजों ने इस बात का संकेत दिया कि म्यांमार ततमादॉ सिद्धांत को स्वीकार नहीं करता। हालांकि, चुनाव के नतीजों के बावजूद एसएलओआरसी ने नेताओं को सत्ता पर काबिज होने की इज़ाजत नहीं दी और सेना ने अपना कब्जा बनाए रखा। साथ ही नए संविधान के सिद्धांत तैयार करने के लिए राष्ट्रीय सम्मेलन की मांग की जिसके बाद ही नए चुनाव होने थे। वर्ष 1993 में सेना द्वारा एक नया संविधान तैयार करने के लिए राष्ट्रीय सम्मेलन (एनसी) आयोजित किया गया था जिसमें 702 प्रतिनिधि थे।[37]

जब 9 जनवरी 1993 को एनसी की बैठक हुई तो 702 प्रतिनिधियों में से केवल 107 प्रतिनिधि मई 1990 के चुनाव में चुने गए थे, जिनमें से 88 एनएलडी से थे। अन्य आमंत्रितों में अल्पसंख्यक, किसान, श्रमिक, बुद्धिजीवी और टेक्नोक्रेट, सरकारी अधिकारी और अन्य थे। बहस को समाप्त करने के लिए सख्त प्रक्रियात्मक नियम लागू किए गए, इससे एनसी स्वतंत्र राजनीतिक संगठन और गतिविधि को समाप्त करने का बाध्यकारी उपकरण बन गई। 16 सितंबर 1993 तक मुख्य न्यायाधीश यू आंग टो ने 104 मूलभूत सिद्धांतों को प्रस्तुत किया जिन्हें आठ समूहों द्वारा प्रस्तुत 22 शोधपत्रों पर आधारित बताया गया, जो नए संविधान की नींव रखने वाले थे। एसएलओआरसी ने 15 सितंबर 1993 को एक सरकार-संगठित, गैर-सरकारी संगठन के रूप में यूनियन सॉलिडैरिटी एंड डेवलपमेंट एसोसिएशन (यूएसडीए) की स्थापना की। आंग सान सू की द्वारा एनसी के अलोकतांत्रिक और सत्तावादी होने की आलोचना की गई और अंततः एनएलडी के प्रतिनिधियों को 30 नवंबर 1995 को निष्कासित कर दिया गया। इसकी वजह से एनसी को मार्च 1996 से 2004 तक के लिए स्थगित कर दिया गया; जिससे एसएलओआरसी को म्यांमार पर अपना शासन जारी रखने की अनुमति मिल गई। एसएलओआरसी ने नवंबर 1997 में अपना नाम बदलकर स्टेट पीस एंड डेवलपमेंट काउंसिल (एसपीडीसी) रख लिया, इससे यह संकेत मिलता है कि इसने कानून और व्यवस्था को बहाल किया और यह शांति एवं विकास के लिए काम करेगा। हालांकि वे सेना को मजबूत बना रहे थे और अपनी राजनीतिक प्रतिनिधि यूएसडीए का समर्थन कर रहे थे, उन्होंने राजनीतिक असंतोष को न्यूनतम बनाए रखा। 1990 के दशक में पड़ोसी दक्षिण पूर्व एशियाई देशों समेत बढ़ते अंतरराष्ट्रीय दबाव ने, सत्ताधारी सेना को, संविधान के एजेंडे पर वापस लाने के साथ एनसी के पुनर्गठन के जरिए 30 अगस्त 2003 को सात-चरण वाले रोडमैप की घोषणा करने को विवश किया।

मौलिक सिद्धांतों और विस्तृत बुनियादी सिद्धांतों को अपनाने के साथ 3 सितंबर 2007 को एनसी संपन्न हुआ।[38]

राष्ट्रीय सम्मेलन के आयोजन के माध्यम से 1993 में शुरू की गई संविधान का मसौदा तैयार करने की प्रक्रिया 2007 के आखिर और 2008 की शुरूआत में पूरी हुई थी। फरवरी 2008 में एसपीडीसी ने घोषणा की कि संविधान के प्रारूप पर, उसी वर्ष 10 मई को जनमत संग्रह कराया जाएगा। म्यामांर संघ गणराज्य के संविधान ने एक द्विसदनीय राष्ट्री संसद की स्थापना की जिसे पाइदाउंग्सु ह्लुटाव के नाम से जाना जाता है, इसमें 440- सीट पाइथू ह्लुटाव या निचला सदन और 224- सीटों वाला अमीओथा ह्लुटाव या ऊपरी सदन है। इसके अतिरिक्त, चौदह राज्य और क्षेत्रीय ह्लुटाव बनाए गए थे। सभी संसदीय निकायों में सेना को 25 प्रतिशत सीटों की गारंटी दी जाती है, जो रक्षा सेवाओं के कमांडर-इन-चीफ द्वारा नियुक्त सैन्य कर्मियों द्वारा भरी जाती हैं।[39] 7 नवंबर 2010 को म्यांमार में बीस वर्षों के अंतराल के बाद चुनाव हुए। एनएलडी ने इस आधार पर चुनावों का बहिष्कार किया कि 2008 का संविधान अलोकतांत्रिक था और मार्च 2010 में एसपीडीसी द्वारा जारी राजनीतिक दल पंजीकरण कानून के तहत आंग सान सू की को पार्टी से निष्कासित कर दिया गया था। केंद्रीय चुनाव आयोग (यूईसी) ने 18 नवंबर को परिणामों की घोषणा की जिसमें सेना समर्थित यूएसडीपी ने चुनाव जीता। प्रमुख विपक्षी और लोकतंत्र समर्थक दलों ने चुनाव परिणामों को खारिज कर दिया और संसद में भाग लेने से इनकार कर दिया।[40]

30 मार्च 2011 को एक नई सरकार बनाई गई, जो अपने कर्मचारियों के संदर्भ में पिछली सैन्य व्यवस्था की बहुत याद दिलाती थी, इनमें अधिकांश सेवानिवृत्त तातामादॉ सदस्य थे।[41] हालांकि, 2011 में एसपीडीसी के अंत के साथ सरकार भी नहीं रही। एसपीडीसी के तहत, म्यांमार की सशस्त्र सेना या ततमादॉ और केंद्र सरकार के बीच कोई स्पष्ट अंतर नहीं था क्योंकि सैन्य उच्च कमान और कार्यकारी नेतृत्व एक ही थे। 2011 के बाद अर्ध-नागरिक शासन में परिवर्तन हुआ; जहां एसपीडीसी के शीर्ष अधिकारियों समेत पूर्व वरिष्ठ सैन्य अधिकारियों ने नई संवैधानिक सरकार का प्रबंध करना शुरू किया। राष्ट्रपति थीन सेन जिन्होंने 2011 से 2016 तक पदभार ग्रहण किया था, वे स्वयं एसपीडीसी में चैथे रैंक के अधिकारी थे, जबकि श्वे मान और खिन आंग म्यिंट, जिन्होंने केंद्रीय विधानसभा के अध्यक्षों के रूप में महत्वपूर्ण भूमिकाओं में संक्रमणकालीन सरकार में काम किया था, वे भी सैन्य शासन के दौरान शीर्ष कमांडर थे। परिवर्तनकालीन वर्षों (2011-2016) के दौरान म्यांमार की अंतरराष्ट्रीय छवि को फिर से स्थापित करने के लिए बहुत प्रयास किए गए थे, जिसमें एनएलडी का औपचारिक राजनीतिक व्यवस्था में स्वागत करना, दक्षिणपूर्व एशियाई खेलों की मेजबानी और 2014 में पहली बार आसियान की अध्यक्षता करना शामिल था। 2014 में आयोजित आसियान और पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन सरकार के लिए म्यांमार के समाज की बढ़ती जीवंतता को प्रदर्शित करने का एक अवसर था।[42]

परिवर्तन काल में म्यांमार ने राजनेताओं की संख्या में नाटकीय वृद्धि के साथ बदलाव देखे, सरकार की एक बहुस्तरीय प्रणाली के भीतर सत्ता का क्रमिक प्रसार और राजनीति, आर्थिक और नागरिक समाज पर प्रतिबंधों को कम किया जा रहा था।[43] आरंभ से ही म्यांमार के गहरे अधिनायकवाद से संक्रमण की अपनी सीमाएं सरकार में अपनी सेना के दखल के कारण थी। जबकि 2008 के संविधान में संशोधन पर विचार करने के लिए एक संवैधानिक संयुक्त समीक्षा समिति का गठन किया गया था, समिति ने 31 जनवरी 2014 को अपनी रिपोर्ट दी, केंद्र सरकार और इसकी जातीय- अल्पसंख्यक नियंत्रित सरकारों के बीच एक अधिक न्यायसंगत शक्ति-साझाकरण व्यवस्था का निर्माण एकमात्र महत्वपूर्ण प्रस्तावित परिवर्तन रही और समिति अपनी अपेक्षाओं पर खरी न उतर सकी।[44]

सैन्य-संलेखक संविधान के तहत, राष्ट्रीय विधायिका में एक चौथाई सीटें सैन्य-नियुक्त प्रतिनिधियों के लिए आरक्षित थीं जो आमतौर पर एक ब्लॉक के रूप में मतदान करते थे। इसके लिए एनएलडी को बहुमत प्राप्त करने के लिए निर्वाचित सीटों में से दो-तिहाई सीटें जीतने की आवश्यकता थी। इसके अलावा, संवैधानिक परिवर्तन से संबंधित मामलों पर वीटो शक्ति होने से सेना ने पर्याप्त राजनीतिक सुधार लाना लगभग असंभव बना दिया। इसमें आंग सान सू की को म्यांमार के राष्ट्रपति के रूप में चुने जाने से अयोग्य घोषित किया जाना शामिल था क्योंकि इसमें म्यांमार के संविधान में परिवर्तन शामिल था जिसमें कहा गया था कि 'किसी विदेशी शक्ति के प्रति निष्ठा नहीं है, किसी विदेशी शक्ति या किसी दूसरे देश की शक्ति या विदेशी नागरिक के अधीन नहीं है'। सू की के दिवंगत पति माइकल एरिस ब्रिटिश थे और उनके दो बच्चे भी ब्रिटिश नागरिकता रखते थे, इसी आधार पर संविधान ने राष्ट्रपति पद के लिए उनके चुनाव पर रोक लगा दी थी।[45]

8 नवंबर 2015 को म्यांमार ने 2008 के संविधान के तहत अपना पहला आम चुनाव कराया जिसमें एनएलडी समेत सभी प्रमुख राजनीतिक दलों ने हिस्सा लिया। कुल मिलाकर 91 राजनीतिक दलों ने चुनाव लड़ा, इसमें एनएलडी और यूएसडीपी दो सबसे बड़े दल रहे। यूईसी द्वारा प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार म्यांमार के 34.3 मिलियन योग्य मतदाताओं में से 69 प्रतिशत से अधिक ने नवंबर 2015 के आम चुनावों के दौरान वोट डाले। शान राज्य में सात टाउनशिप और बागो क्षेत्र, काचिन, कायिन और मोन में लगभग 416 वार्ड और ग्रामीण इलाकों को छोड़कर, जहां सुरक्षा कारणों से मतदान रद्द कर दिया गया था, सभी 14 राज्यों और प्रदेशों में चुनाव कराए गए। एनएलडी चुनावों में सबसे बड़े विजेता के रूप में उभरा। ऊपरी और निचले सदनों में निर्वाचित सीटों में से 79 प्रतिशत से अधिक और 14 राज्यों और क्षेत्रीय विधानसभाओं में से 10 में अधिकांश सीटों पर जीत हासिल की। यूएसडीपी ने ऊपरी और निचले सदन में 8 प्रतिशत सीटें जीतें। नेशनल यूनिटी पार्टी अपवाद रही जिसने ऊपरी सदन में एक सीट पर जीत दर्ज की, राष्ट्रीय विधान-सभा में गैर-जातीय राष्ट्रीय दलें एक भी सीट नहीं जीत सकीं, इनमें वैसे दल- जैसे नेशनल डेमोक्रेटिक फोर्स, भी थे जिन्होंने पिछली विधान-सभा में सीटें जीतीं थीं।[46]

6 अप्रैल 2016 को म्यांमार के स्टेट काउंसलर का पद, जो प्रधानमंत्री (पीएम) के समकक्ष है, को आंग सान सू की के लिए बड़ी भूमिका की अनुमति देने के लिए बनाया गया था। म्यांमार की नई सरकार ने 2008 के संविधान, जिसने सेना को अधिकार दिए, से विवश रही। स्टेट काउंसलर के रूप में अपने पहले कार्यकाल के दौरान, सू की ने विभिन्न जातीय अल्पसंख्यक सशस्त्र समूहों के साथ एक नए राष्ट्रव्यापी शांति समझौते की मांग की। हालांकि, बहुत कुछ हासिल नहीं हो सका क्योंकि सशस्त्र सहायक सेना अपने क्षेत्रों पर उनकी सरकार के दावों को स्वीकार करने को तैयार नहीं थे।[47] इसके अलावा, आंग सान सू की को, रखाइन में रोहिंग्या मुसलमान अल्पसंख्यकों के खिलाफ क्रूर हिंसा और रॉयटर्स के दो पत्रकारों- वा लोन और क्याव सो ओ को सेना की क्रूरताओं को सामने लाने के लिए जेल में डाले जाने वाले मामले पर बोलने से इनकार करने के कारण अंतरराष्ट्रीय प्रतिक्रिया का भी सामना करना पड़ा। हालांकि अगस्त 2017 में रखाइन राज्य में हुई सैन्य कार्रवाई के लिए सू की उत्तरदायी नहीं थीं, लेकिन सहायक सेना विद्रोह के लिए की गई कार्रवाई एक उपयुक्त प्रतिक्रिया थी, इसकी निंदा और प्रचान न करना म्यांमार में लोकतंत्र की प्रगति पर सवाल उठाता है।[48]

चुनावी समस्याओं में भेदभावपूर्ण नागरिकता और अन्य कानून शामिल थे जो अधिकांश रोहिंग्या मुसलमान मतदाताओं और उम्मीदवारों को वर्जित बनाते थे; सेना के लिए 25 प्रतिशत संसदीय सीटों का आरक्षण; सरकारी आलोचकों के आपराधिक मुकदमे; सरकारी मीडिया तक पार्टी की असमान पहुँच; और एक स्वतंत्र चुनाव आयोग और शिकायतों के समाधान तंत्र की कमी।[49] वर्ष 2020 के आम चुनावों की अगुवाई में, सेना के कमांडर-इन-चीफ, सीनियर जनरल मिन आंग हलिंग ने चुनाव आयोग की आलोचना करते हुए एक बयान जारी किया

जिसमें तर्क दिया गया कि 'कमजोरी और कमियां जो पिछले चुनावों में कभी नहीं देखी गईं, अब दिखाई दे रही हैं'। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर भी पाबंदियां लगाई जा रही थी, इंटरनेट सेवा बंद कर दी गई और कोविड-19 के कारण अभियान संबंधी प्रतिबंध भी लगे थे।[50]

वर्ष 2020 के चुनावों में एनएलडी ने देश भर के कुल 1,117 निर्वाचित सीटों में से 920 (या 82 प्रतिशत) सीटों पर जीत हासिल की, जबकि सैन्य समर्थित मुख्य विपक्षी दल, यूनियन सॉलिडैरिटी एंड डेवलपमेंट पार्टी ने 71 सीटों या निर्वाचित सीटों की 6.4 प्रतिशत सीटों पर जीत हासिल की। आम चुनावों के बाद, जिसमें एनएलडी ने भारी जीत हासिल की थी, 1 फरवरी 2021 को सू की और पार्टी के अन्य नेताओं को हिरासत में लेने के साथ सेना ने सत्ता पर कब्जा कर लिया। हालांकि कार्टर सेंटर जैसे अंतरराष्ट्रीय पर्यवेक्षकों और स्थानीय निगरानी समूहों ने कहा कि चुनाव स्वतंत्र और निष्पक्ष थे, सेना के अनुसार चुनाव "स्वतंत्र और निष्पक्ष नहीं" थे और संविधान और कानून "के अनुपालन में नहीं" थे। तख्तापलत करने वाले सीनियर जनरल मिन आंग हलिंग ने चुनावी अनियमितताओं की समीक्षा का आदेश दिया था। देश की 315 टाउनशिप में मतदाता सूचियों और मतपत्रों की यूईसी द्वारा लगभग छह माह की लंबी जांच के बाद, मतदान सूचियों में 11 मिलियन (1 करोड़ दस लाख) से अधिक अनियमितताएं पाई गई, जैसा कि ऐसे लोगों को भी शामिल किया गया था जिनके पास राष्ट्रीय आईडी कार्ड नहीं थे, साथ ही मतों की प्रतिलिपि की गई थी, एक ही आईडी कार्ड नंबर वाला व्यक्ति एक से अधिक सीटों पर जाकर मतदान किया पाया गया।[51] म्यांमार में हुए तख्तापलट ने लोकतांत्रिक सुधार के एक दशक को समाप्त कर दिया है, देश अलग- थलग पड़ गया है और पश्चिमी देशों द्वारा उस पर प्रतिबंध लगाए जा रहे हैं। 1 अगस्त 2022 को एक और छह माह के लिए आपातकालीन नियम के विस्तार के साथ अगस्त 2023 में नए चुनावों का आयोजन विरोधियों के साथ और अधिक अनिश्चित हो जाता है, भले ही यह सुनिश्चित न हो कि यह स्वतंत्र और निष्पक्ष होगा या नहीं।[52]

फिलीपींस

4, 1946 को अमेरिकी औपनिवेशिक शासन द्वारा संप्रभुता स्थानांतरित करने के बाद फिलीपींस गणराज्य स्वतंत्र राष्ट्र बना था। स्वतंत्रता मिलने के बाद फिलीपींस ने अमेरिकी संवैधानिक मॉडल को कांग्रेस और न्यायिक जांच एवं संतुलन द्वारा सैद्धांतिक रूप से विवश सरकार की निर्वाचित राष्ट्रपति प्रणाली को अपनाया। संप्रभुता के पूर्ण स्थानांतरण के बाद जुलाई 1946 में मैनुएल रोक्सास फिलीपींस गणराज्य के पहले राष्ट्रपति बने।[53] युद्ध के दौरान फिलिपिनो वफादारी के लिए पारस्परिकता में अमेरिकी पुनर्वास सहायता, जापान के पुनर्निर्माण के लिए दिए गए पैसे से बहुत कम था, के साथ, देश आर्थिक रूप से विकास करने के लिए संघर्ष कर रहा था। इसके अलावा, अमेरिकी सहायता नव-औपनिवेशिक रियायतों से भी संबंधित थी, जिसमें पेसो का डॉलर से सख्त मुद्रा लिंक और अमेरिकी निगम और व्यक्तियों के लिए विशेष विशेषाधिकार शामिल थे। अमेरिका ने निन्यानबे वर्षों तक अपने सैन्य ठिकानों को बनाए रखने पर भी जोर दिया, जिसमें सुबिक बे और क्लार्क एयर बेस में बेड़े का बंदरगाह शामिल था- जिसमें फिलीपीन कानून अमेरिकी सैनिकों पर लागू नहीं होता था। फिलीपींस की स्वतंत्रता के पहले बीस वर्षों में राष्ट्र ने प्रमुख राजनीतिक नेतृत्व शून्यता के साथ- साथ आर्थिक चुनौतियों का सामना किया। इन स्थितियों ने फर्डिनेंड मार्कोस को उत्तरी लूज़ोन को एक महत्वाकांक्षी युवा सीनेटर के रूप में उभरने में सक्षम बनाया, जो 1965 में राष्ट्रीय चुनाव जीतने और फिलीपींस की स्वतंत्रता के बाद के इतिहास में सबसे शक्तिशाली राजनीतिक हस्तियों में से एक बने। मार्कोस के अधीन अधिनायकवादी शासन की स्थापना तब हुई जब सितंबर 1972 में मार्शल लॉ घोषित किया गया था, उनके

दूसरे कार्यकाल की समाप्ति से पहले और 1935 के संविधान में प्रदान की गई दो पूर्ण कार्यकालों के बाद सत्ता का समर्पण नहीं किया गया था।[54]

राष्ट्रपति के दो कार्यकालों की संवैधानिक सीमा को पार करने के लिए मार्शल रूल (सैनिक कानून) लागू करने से मार्कोस के, युवा विपक्षी सीनेटर बेनिग्नो एक्विनो जैसे राजनीतिक प्रतिद्वंद्वियों को बेअसर करने में मदद मिली। एक्विनो और कई अन्य प्रमुख विपक्षी राजनेताओं को मार्शल शासन के तहत कैद कर लिया गया था और मार्कोस ने कई कुलीन वर्ग के व्यवसायों को जब्त कर लिया था। इन कार्रवाइयों ने मार्कोस के सत्तावादी शासन का विरोध करने के बजाय उसके साथ सहयोग करने के लिए अन्य राजनेताओं और व्यापारियों को मजबूर किया। मार्कोस के शासन में, फिलीपींस की अर्थव्यवस्था में सुधार होने लगा क्योंकि निर्यात में वृद्धि हुई, विदेशी निवेश को प्रोत्साहित किया गया और औद्योगीकरण में तेजी लाने हेतु बड़े पैमाने पर बुनियादी संरचना संबंधी अभियान चलाए गए। इन महत्वाकांक्षी परियोजनाओं को पूरा करने के लिए मार्कोस ने अंतरराष्ट्रीय बाज़ारों से उधार लिया, जिससे देश का विदेशी ऋण 1975 के 3.8 बिलियन अमेरिकी डॉलर से बढ़कर 1980 में 12.7 बिलियन अमेरिकी डॉलर हो गया। प्रतिकूल आर्थिक कारकों को ऊर्जा संकट से और बढ़ावा मिला। प्रशासन द्वारा अधिकारों के बढ़ते दुरुपयोग के साथ- साथ आर्थिक कुप्रबंधन ने जनवरी 1981 में मार्शल लॉ को समाप्त करने के लिए मजबूर करने वाले राजनीतिक एवं कानूनी संस्थानों के खिलाफ मोहभंग का कारण बना। अगस्त 1983 में मनीला हवाईअड्डे पर विपक्षी नेता बेनिगो एक्विनो की हत्या के बाद, यह पता चला कि सेंट्रल बैंक ने देश के वित्त रिकॉर्ड को गलत साबित कर दिया था, एक पूर्ण पैमाने पर वित्तीय मंदी का कारण बना। इसने बड़े पैमाने पर पूंजी पलायन का नेतृत्व किया और उच्च मुद्रास्फीति के कारण पेसो में गिरावट आई, जिससे सरकार को ऋण अधिस्थगन हेतु अपने ऋण को 25 बिलियन अमेरिकी डॉलर तक बढ़ाने को विवश होना पड़ा। सरकार को गंभीर आर्थिक संकुचन हेतु बेलआउट के बदले अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) के मितव्ययिता कार्यक्रम को स्वीकार करने के लिए भी मजबूर होना पड़ा और इससे सकल घरेलू उत्पाद में केवल दो वर्षों में 15 प्रतिशत की गिरावट आई।[55]

राष्ट्रपति मार्कोस, अमेरिका के दबाव में और देश के निरंतर आर्थिक संकट के कारण फरवरी 1986 में एक आकस्मिक चुनाव की घोषणा की, जिसमें उन्हें बेनिगो एक्विनो की पत्नी (विधवा) कोराजोन एक्विनो से चुनौती मिली थी। चुनाव में मार्कोस की जीत हुई; हालांकि फिलिपिनो ने इस झूठ को स्वीकार करने इनकार कर दिया। 22 फरवरी को राष्ट्रपति मार्कोस द्वरा कोराजोन एक्विनो पर चुनाव जीतने के उनके पुनर्दावे का विरोध करने के लिए फिलीपींस की लाखों जनता फिलिपिनो एपिफेनियो डे लॉस सैंटोस एवेन्यू पर सड़कों पर उतर आए। मनीला के आर्कबिशप कार्डिनल जैम सिन ने फिलीपींस के लोगों से शांतिपूर्ण विरोध प्रदर्शन का समर्थन करने का आह्वान किया जिसे पीपुल पावर मूवमेंट के नाम से जाना जाता है। कोराजोन एक्विनो को चुनाव में विजेता घोषित किया गया था और मार्कोस एवं उनकी पत्नी को हवाई में निर्वासन के लिए 25 फरवरी को देश छोड़कर जाना पड़ा था।[56]

राष्ट्रपति एक्विनो ने एक द्विसदन वाले कांग्रेस के साथ थोड़ा संशोधित रूप में बहाल किए गए अमेरिकी मॉडल के साथ एक वैध संवैधानिक ढांचे को बहाल करने की शुरूआत की लेकिन इसमें एक राष्ट्रपति का कार्यकाल छह वर्ष के होने का प्रावधान किया गया था। फरवरी 1987 में कराए गए राष्ट्रीय जनमत संग्रह में इस नए संविधान को भारी मतों के साथ अनुमोदित किया गया था। कैराजोन एक्विनो ने नए संविधान के तहत अपना कार्यकाल पूरा किया और उनके बाद मई 1992 में चुनावों में अपनी सैन्य दक्षता, एक्विनो प्रशासन के प्रति वफादारी और भविष्य में सुधार कार्यों को पूरा करने के वादे के साथ जीत हासिल करने वाले फिदेल रामोस नए राष्ट्रपति बने।[57] रामोस प्रेसीडेंसी ने आर्थिक सुधारों की श्रृंखला शुरू कर फिलीपींस लोकतंत्र के समेकन का

नेतृत्व किया जिसने देश की अर्थव्यवस्था को विकास के पथ पर लाने में मदद की। उनकी अध्यक्षता में मोरो नेशनल लिबरेशन फ्रंट (एमएनएलएफ)- एक मुस्लिम अलगाववादी आंदोलन- और कम्युनिस्ट विद्रोहियों एवं सैन्य विद्रोहियों के साथ वार्ता कर शांति समझौता करते हुए राजनीतिक स्थिरता भी आई। इन उपायों ने सुनिश्चित किया कि 1997-98 के एशियाई वित्तीय संकट के दौरान फिलीपींस अन्य दक्षिण पूर्व एशियाई देशों की तरह कठिन नहीं था। हालांकि, मार्कोस के बाद का आर्थिक शासन गरीबी और बेरोज़गारी को कम करने में विफल रहा है। इसलिए, रामोस जैसे सफल सुधारवादी राष्ट्रपति के बावजूद देश ने मजबूत लोकलुभावन नेताओं का उदय देखा जिन्होंने गरीब मतदाताओं के मजबूत समर्थन से राष्ट्रपति पद जीता।[58]

वर्ष 2008 के वित्तीय संकट और वैश्विक अर्थव्यवस्था की मंदी पर इसके प्रभाव ने फिलीपींस के सामने आर्थिक परिस्थितियों को और भी कठिन बना दिया है, आधिकारिक रिपोर्टों के अनुसार बेरोज़गारी दर जनवरी 2008 में 7.4 प्रतिशत से बढ़कर जनवरी 2009 में 7.7 प्रतिशत हो गई। विदेश में काम करने वाले फिलीपीन्स के श्रमिकों द्वारा प्रेषण में भी बहुत अधिक गिरावट आई जो इसकी अर्थव्यवस्था के लिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि इसका देश के सकल घरेलू उत्पाद के 11 प्रतिशत के बराबर होने का अनुमान है। लोकतंत्रीकरण और इसकी अंतिम सफलता लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्थितियों को संबोधित करने की सीमा पर उच्च प्रीमियम रखती है। इस संदर्भ में, अपने नौकरी बाजार में कमजोरी के साथ- साथ उच्च गरीबी स्तर से पीड़ित फिलीपींस अधिक स्थिर व्यापक आर्थिक स्थिति के लिए बहुत कम अवसर प्रदान करता है; इसके वर्तमान लोकतंत्र के लिए कमियों का कारण। जबकि फिलीपींस के नागरिकों के बीच, लोकतंत्र सरकार की पसंदीदा प्रणाली बनी हुई है। एक अभिप्राय यह भी है कि यह ऐसी बुनियादी सेवाएं प्रदान करने में सक्षम नहीं है जो लोगों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार कर सके। यह न केवल उच्च उम्मीदों पर आधारित है कि लोकतंत्र क्या हासिल कर सकता है बल्कि विशेष रूप से सामाजिक-आर्थिक मोर्चे पर प्रदर्शन की वास्तविक कमी पर आधारित है।[59]

जोसेफ ई. एस्ट्राडा, जिन्होंने 1998 में गरीब मतदाताओं के मजबूत समर्थन के परिणामस्वरूप चुनाव जीता, रामोस के सुधारों के बावजूद उनकी असफलता का परिणाम था। रोजगार सृजन और सामाजिक कल्याण के माध्यम से असमानता को कम करने की आवश्यकता फिलीपींस की लोकतांत्रिक राजनीतिक प्रणाली का मुख्य नीतिगत लक्ष्य है। इन उम्मीदों को पूरा करने में विफलता के कारण अक्सर चुनाव जीतने वाले मजबूत लोकलुभावन नेताओं का उदय हुआ।[60]

राष्ट्रपति रोड्रिग दुतेर्ते, जिन्होंने खुद को एक लोकलुभावन और राष्ट्रवादी बताया, ने 30 जून 2016 को एक अभियान, जिसमें नशीले पदार्थों के डीलरों एवं अन्य अपराधियों को फांसी देने का वादा किया गया था, के कारण पदभार ग्रहण किया था। दुतेर्ते सरकार द्वारा 'बिल्ड बिल्ड बिल्ड' कार्यक्रम के माध्यम से बुनियादी ढांचे को बढ़ावा देने के साथ- साथ निजी निवेश को बढ़ावा देने के संबंध में बड़े सुधार किए गए हैं, जिसके परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था महामारी से पहले मामूली रूप से बढ़ रही है। थोक और खुदरा व्यापार में मजबूत वृद्धि के कारण फिलीपींस जीडीपी ने 2021 की तीसरी तिमाही में 7.1 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की।[61] दुतेर्ते के शासन में भ्रष्टाचार बढ़ रहा था। 2019 में करप्शन परसेप्शन इंडेक्स (भ्रष्टाचार संवेदन सूचकांक) में फिलीपींस का स्थान 180 देशों में से सबसे कम भ्रष्ट देशों में 133वें पायदान पर था जबकि 2019 के लिए इकोनॉमिस्ट इंटेलिजेंस यूनिट के डेमोक्रेसी इंडेक्स में फिसलकर 54वें पायदान पर आ गया था। फिलीपींस में बढ़ता भ्रष्टाचार और लड़खड़ाती लोकतांत्रिक संस्थाएं सतत विकास की उपलब्धि को धीमा कर सकती हैं जो गरीबी को और बढ़ा देंगी; यह इसकी लोकतांत्रिक राजनीतिक प्रणाली के भविष्य के लिए खतरा है।[62]

वर्षों से फिलीपींस की राजनीति को लोकलुभावन नेताओं द्वारा देश की गहरी सामाजिक-आर्थिक असमानताओं द्वारा चिन्हित किया गया है। 9 मई 2022 को, राष्ट्रपति और उप-राष्ट्रपति चुनाव हुए, जिसमें क्रमशः फर्डिनेंड मार्कोस जूनियर और सारा दुतेर्ते-कार्पियो, विजेता रहे। अपने चुनाव अभियान के दौरान वे महामारी से उबरने को प्राथमिकता देते हैं जो अधिकांश मतदाताओं के मन में छाया हुआ है।

सिंगापुर

सिंगापुर जो ब्रिटिश मलय का हिस्सा था, ने 1951 में सीमित प्रतिनिधि संस्थानों के आरंभ के बाद 1959 में स्वशासन का दर्जा हासिल किया और तीन साल के बाद एक संवैधानिक आयोग ने भागीदारी और स्वशासन के बड़े उपायों की सिफारिश की। वर्ष 1955 में चुनावों के बाद डेविड मार्शल के नेतृत्व में मध्यम वामपंथी लेबर फ्रंट- सिंगापुर में पैदा हुए यहूदी वर्ग- यूएमएनओ और मलय चाइनीज एसोसिएशन (एमसीए) के सदस्यों के साथ गठबंधन सरकार बनाने में सक्षम था। 1959 तक सिंगापुर रक्षा और आंतरिक सुरक्षा पर अंग्रेजों के नियंत्रण के साथ सीमित रूप से स्वतंत्र था। मार्शल के इस्तीफे और चीनी मूल के पहले मुख्यमंत्री के रूप में लिम यू हॉक की नियुक्ति के बाद; असंतोष की दिशा में कठोर नीतियों का पालन करने और अंग्रेजो को आश्वस्त करने के साथ 1959 में लिम स्वतंत्रता का आश्वसान प्राप्त कर सके।[63] सिंगापुर का स्व-शासन प्राप्त करना पीपुल्स एक्शन पार्टी (पीएपी) की चुनावी सफलता के साथ मेल काती है जो मई 1959 के चुनावों के बाद से सत्ता में बनी हुई है। पार्टी की स्थापना नवंबर 1954 में अंग्रेजी- शिक्षित पेशेवरों द्वारा की गई ती, जिन्होंने मलेशिया की अवैध कम्युनिस्ट पार्टी से जुड़े कट्टरपंथी ट्रेड यूनियनों के साथ गठबंधन कर द्वीप के चीनी-शिक्षित बहुमत का समर्थन मांगा था। ली कुआन यू, जो सिंगापुर के पहले प्रधानमंत्री बने और जून 1959 से नवंबर 1990 तक सेवा की, ने पीएपी की स्थापना में अग्रणी भूमिका निभाई थी। वर्ष 1961 में प्रायद्वीपीय मलय और सिंगापुर के बीच विलय के साथ पीएपी मंच ने एक लोकतांत्रिक समाजवादी गैर-कम्युनिस्ट एकजुट मलय का आह्वान किया। 1963 में मलेशिया संघ की स्थापना के साथ, मई 1964 में मलेशियाई चुनावों में पीएपी के असफल चुनावी अभियान ने नस्लीय तनाव को जन्म दिया, जिसके बाद अगस्त 1965 में संघ से सिंगापुर का निष्कासन हुआ। मलेशिया से सिंगापुर के निष्कासन के परिणाम ने पीएपी के लोकप्रिय समर्थन को मजबूत करने में मदद की जिसमें पार्टी ने अप्रैल 1968 से अक्टूबर 1981 में उपचुनाव तक विधानसभा की हर सीट जीती।[64]

दक्षिणपूर्व एशिया में राजनीतिक संवाद का अध्ययन करने में सिंगापुर एक विसंगति के रूप में खड़ा है क्योंकि इसमें एक पार्टी की निरंतरता है जो संसदीय लोकतंत्र में सत्ता में बनी हुई है। सिंगापुर की राजनीतिक प्रणाली को एक अर्ध-लोकतंत्र के रूप में वर्णित किया गया है जो एक साम्यवादी लोकतंत्र, एक आधिपत्य चुनावी सत्तावादी शासन और एक तानाशाही होगी। इसकी राजनीतिक प्रणाली को कार्यकारी शाखा के भीतर कम संख्या में व्यक्तिगत नेताओं के हाथों में सत्ता के केंद्रीकरण में निरंकुश होने के रूप में वर्णित किया गया है जिसमें कुछ संस्थागत जांच और पूर्ण लोकतंत्र से जुड़े संतुलन हैं। पीएपी सरकार ने कभी भी विपक्षी दलों के गठन को रोका नहीं है और संविधान के अनुसरा प्रत्येक पांच वर्ष में चुनाव कराना जारी रखा है; यह अपने नेताओं की वैधता सुनिश्चित करने की कवायद करता है।

इसके अलावा, सुशासन जिसने 1945 में सिंगापुर को औपनिवेशिक निर्भरता से दक्षिण पूर्व एशिया के सबसे संपन्न उद्यमी राष्ट्र और कारोबार का प्रमुख क्षेत्रीय और वैश्विक केंद्र में बदलने में मदद की; पीएपी के निरंतर शासन के लिए एक सफलता की कहानी रही है। जबकि पीएपी नीतियों ने अंतरराष्ट्रीय पूंजी के लिए दुनिया के सबसे मेहमाननवाज़ माहौल का निर्माण किया, इसने यह सुनिश्चित करने के लिए आक्रामक पुनर्वितरण

कार्यक्रम भी चलाए कि अधिकांश सिंगापुरवासी जीवन स्तर में सुधार से लाभान्वित हों। उच्च सामाजिक-आर्थिक जीवन स्थितियों के साथ- साथ राजनीतिक स्थिरता ने अन्य विपक्षी दलों के विकास के लिए समर्थन पैदा करने हेतु बहुत कम जगह छोड़ी और इसलिए पीएपी निर्विरोध बनी हुई है।[65]

पीएपी ने 1980 के दशक के आरंभ तक संसद में एक भी विपक्षी सदस्य के बिना सिंगापुर पर शासन किया। ऐसा सिंगापुर की अत्यधिक जटिल चुनावी प्रणाली के कारण भी हुआ था जो संविधान में बार-बार किए गए संशोधन का परिणाम है, जो पीएपी के विधायिका पर पूर्ण नियंत्रण से संभव हुआ है।[66] 10 जुलाई को सिंगापुर के 2020 के आम चुनाव में विपक्ष ने 1963 के बाद से संसद में सबसे अधिक निर्वाचित सीटें प्राप्त की। पीएपी ने संसद की 93 सीटों में से 83 सीटें जीतीं जबकि वर्कर्स पार्टी ने कुल दस सीटों में से चार सीटें जीतीं। वर्कर्स पार्टी पीएपी के विकल्प के रूप में उभरी और इसके नेता प्रीतम सिंह को प्रधानमंत्री ली सीन लूंग द्वारा नेता विपक्ष का खिताब दिया गया।[67]

थाईलैंड

वर्ष 1932 से पहले, थाईलैंड साम्राज्य को सियाम कहा जाता था और यह एकमात्र क्षेत्रीय प्रदेश था जो कभी भी किसी यूरोपीय उपनिवेश का हिस्सा नहीं था। 24 जून 1932 को रक्तहीन क्रांति के जरिए थाईलैंड एक निरंकुश राजशाही से संवैधानिक राजतंत्र में बदल गया था। पीपुल्स पार्टी द्वारा सरकार बनाने के बाद, दिसंबर 1932 में जिस संविधान को अंगीकार किया गया था, उसमें यह सुनिश्चित किया गया था कि सत्ता का संतुलन पार्टी का उत्तरदायित्व बना रहे। पीपुल्स पार्टी के सदस्यों के हाथों में अधिकार के साथ इसने विधानसभा और मंत्रिमंडल में नियुक्ति के एकाधिकार के जरिए उनकी प्रधानता भी सुनिश्चित की। मार्च 1933 में लुआंग प्रदित मनुथामिन के नेतृत्व में पार्टी की कट्टरपंथी शाखा तख्तापलट करना चाहती थी। इस प्रयास को असफल कर दिया गया और राजा एवं कुछ रुढ़ीवादी रईसों द्वारा की गई कार्रवाई द्वारा प्रदित को बाहर का रास्ता दिखा दिया गया। जून 1933 में, सेना ने अपने प्रतिनिधि फ्राया फाहोन को प्रधानमंत्री बनाने के लिए तख्तापलट किया और अक्टूबर में प्रिंट बोवोराडेट के नेतृत्व में प्रतिकारी तख्तापलट को भी असफल किया। अपने प्रतिद्वंद्वियों को हर तरफ से हराने के बाद, 1935 में राजा प्रजाधिपोक के राजपाट त्यागने और राजा आनंद के राज्यारोहण के साथ सेना मजबूत स्थिति में थी। सेना की बढ़ती प्रमुखता मुख्य रूप से एक ही पदानुक्रम में, नागरिकों के विपरीत जिनमें एकता की कमी थी और जो राजधानी के समाज के माध्यम से असमान रूप से छोटे- छोटे टुकड़ों में बंटे थे, व्यवस्थित तरीके से संगठित सैन्य संगठनों के लाभ से उपजी थी।[68]

तत्पश्चात, समय- समय पर सैन्य तख्तापलट और सैन्य शासन की वापसी के साथ, विशेष रूप से शीत युद्ध के दौरान, सैन्य- वर्चस्व वाली राजनीतिक संरचना को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि थाईलैंड में लोकतंत्रीकरण एक सहज प्रक्रिया नहीं रही है।[69] थाईलैंड की संवैधानिक राजशाही राजनीतिक व्यवस्था को सेना के हस्तक्षेप का सामना करना पड़ा जो निर्वाचित सरकारों को हटाने या उन्हें गिराने में शामिल थे। सफल आर्थिक विकास के परिणामस्वरूप 1970 के दशक के आरंभ से सेना की राजनीतिक श्रेष्ठता को चुनौती दी जाने लगी, इसमें छात्र सक्रियता के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन भी शामिल था। इसके अलावा, राजा भूमिबोल, जिन्होंने ग्रामीण विकास के प्रति अपनी प्रतिबद्धता के लिए बहुत सम्मान और लोकप्रियता हासिल की थी, ने, देश में लोकतंत्रीकरण की प्रक्रिया को बढ़ावा दिया।[70] इस प्रकार, 1970 के दशक तक अधिकांश आंदोलनों और संगठनों ने शासक के रूप में राजा की भूमिका को चुनौती देना उचित नहीं समझा, बल्कि नागरिक अधिकारों और लोकतंत्र की बहाली के लिए अपील करने का निर्णय लिया।[71]

14 अक्टूबर 1973 को, जब सैन्य शासन के खिलाफ प्रदर्शनकारियों पर पुलिस और सैनिकों ने हमला किया, तो शाही परिवार सामने आया और लोगों को महल परिसर में शरण लेने की अनुमति दी। लेकिन इसी दिन शाम तक, राजभवन ने सत्ताधारी सेना (जून्टा) को अपना शासन समाप्त करने को विवश कर दिया और इस प्रकार प्रिवी काउंसिल के अध्यक्ष को नया प्रधानमंत्री नियुक्त किया गया। राजा भूमिबोल के कार्य ने सभी राजनीतिक ताकतों के ऊपर सर्वोच्च नैतिक अधिकार वाले लोकतांत्रिक सम्राट के रूप में उनकी स्थायी छवि बनाई।[72] राजा ने लोकतांत्रिक चुनावों के आयोजन हेतु नए संविधान का मसौदा तैयार करने के लिए संविधान सभी की नियुक्ति भी की।

वर्ष 1974 तक थाईलैंड को नया लोकतांत्रिक संविधान मिल गया जिसके परिणामस्वरूप बड़ी संख्या में राजनीतिक दलों ने 1975 के चुनाव में वोट के लिए प्रतिस्पर्धा की। नतीजतन आमतौर पर एक कमज़ोर और अस्थिर सरकार का गठन हुआ। इसके बाद, 1970 के दशक के आरंभ में तेल की कीमतों में बहुत अधिक वृद्धि हुई थी जिसने वैश्विक आर्थिक अस्थिरता पैदा कर दी थी। इस घटना ने नव निर्वाचित थाई सरकार पर दबाव बढ़ा दिया था। 1970 के दशक में बड़े पैमाने पर छात्र राजनीति की सक्रियता भी देखी गई जिसने सामाजिक न्याय के लिए आंदोलनों को संगठित करने हेतु काम करने वाले छात्रों के साथ राजनीतिक लामबंदी और ध्रुवीकरण के कारण थाई राजनीति को प्रभावित किया।[73]

वर्ष 1973 से 1976 के बीच, थाईलैंड में छह पीएम हुए जिसके कारण बहुत राजनीतिक अस्थिरता रही और नीति निर्देशों एवं निरंतरता की भी कमी रही। सितंबर 1976 में पूर्व प्रधानमंत्री जनरल थानोम किटिकाचोर्न के निर्वासन से थाईलैंड लैटने पर, बैंकॉक में थम्मासैट विश्वविद्यालय में प्रदर्शनों का दौर शुरू हो गया। 6 अक्टूबर 1976 को पुलिस और कुछ सैन्य गुटों द्वारा समर्थित दक्षिणपंथी तत्वों ने हिंसक हमले किए जिसमें प्रदर्शकारी छात्रों की मौतें भी हुईं। 1970 के दशक की राजनीतिक अराजकता के कारण हजारों थाई युवाओं ने स्कूलों और विश्वविद्यालयों को छोड़कर ग्रामीण इलाकों के कम्युनिस्ट-नेतृत्व वाले विद्रोह में शामिल हो गए। 1980 के दशक की शुरुआत में, जनरल सैयद केर्डफोल की पहल पर, सरकार ने युवा असंतुष्टों का शहरों में वापस स्वागत करना शुरू कर दिया और उनके और थाई सैनिकों के बीच ग्रामीण युद्ध समाप्त हुआ। जनरल प्रेम तिनसुलानोंडा (1980- 1988) और जनरल चटीकाही चूनहावन (1988-1991) के प्रधानमंत्री काल में, थाई अर्थव्यवस्था में आंतरिक संघर्ष कम होने के साथ- साथ तेज़ी भी आने लगी।[74]

हालांकि, फरवरी 1991 में जनरल सुचिंदा क्राप्रयून के नेतृत्व में रक्तहीन तख्तापलट, जिसमें चटिकाही चून्हावन की निर्वाचित सरकार को अपदस्थ किया गया था, ने, थाई लोकतंत्र के चल रहे समेकन में और अधिक अराजकता पैदा कर दी। मार्च 1992 में पूर्ण नागरिक शासन की वापसी के इरादे से हुए चुनावों में ग्रामीण क्षेत्रों में बड़े पैमानों पर वोटों की खरीद-फरोख्त हुई। इसके कारण सेना से जुड़े दलों की जीत हुई और कार्यालय में विशेष भूमिका न निभाने के बावजूद जनरल सुचिंदा को प्रधानमंत्री नियुक्त किया गया। इसके कारण बैंकॉक में विपक्षी पलंद धर्म (नैतिक बल) पार्टी के नेतृत्व में हिंसक झड़पें हुईं। लोकतंत्र समर्थक विरोध- प्रदर्शनकारियों और सेना के बीच हिंसक टकराव की एक श्रृंखला के साथ जिसमें सैकड़ों लोगों की मौत हो गई, दुखद रूप से समाप्त हो गया- इसे 'ब्लैक मई' के नाम से जाना जाता है।[75]

राजा भूमिबोल अदुल्यादेज ने इस डर से हस्तक्षेप किया कि स्थिति नियंत्रण से बाहर हो सकती है। जनरल सुचिंदा के इस्तीफा देने के बाद सिंतबर में नए चुनाव होने तक राजा ने आनंद पन्यारचुन को अंतरिम पीएम के रूप में नियुक्त किया। चुनावों में, डेमोक्रेटिक पार्टी ने 360 संसदीय सीटों में से 185 सीटें जीत कर सत्ता में आई और चुआन लीकपाई नए प्रधानमंत्री बने। जनवरी 1995 में, चुआन लीकपाई सरकार बेहतर लोकतंत्रीकरण

के हित में संवैधानिक संशोधन करने में सफल रही। उनका गठबंधन जुलाई 1995 के नए सात-पार्टी गठबंधन से चुनाव हार गया जिसके बाद बनहरन सिलपर्चा प्रधानमंत्री बने। यह गठबंधन भी नहीं रहा और नवंबर 1996 में हुए चुनावों में एस्पिरेशन पार्टी के नेता पूर्व सेना कमांडर चावलित योंगचैयुथ के नेतृत्व वाली छह-पार्टी गठबंधन से हार गया।

जुलाई 1997 में एशियाई वित्तीय संकट के आरंभ के कारण सरकार गिर गई। इसके कारण मुख्य रूप से डेमोक्रेटिक पार्टी के साथ नए राजनीतिक गठबंधन का उदय हुआ। राजाशाही और सेना के समर्थन से चुआन लीकपाई एक बार फिर प्रधानमंत्री बने।[76]

1997 में थाईलैंड ने एक नया संविधान अपनाया जिसमें दो-सदन वाली विधायिका अब पांच सौ सदस्यों के प्रतिनिधियों के निर्वाचित सदन पर केंद्रित थी और दो सौ सदस्यीय सीनेट भी एक माध्यमिक भूमिका निभाने के लिए चुनी गई थी। निर्वाचनाधिकार में भी सार्वभौमिक परिवर्तन किया गया था, चुनाव लड़ने के लिए सभी उम्मीदवारों को कम- से- कम स्नातक होना चाहिए था।[77] जनवरी 2001 में हुए चुनावों में, 1997 के संविधान के तहत होने वाले पहले चुनाव में, थाकसिन शिनावात्रा द्वारा बनाई गई थाई राक थाई (टीआरटी) पार्टी ने नेशनल असेंबली की 500 सीटों में से 248 सीटों पर जीत हासिल की और कार्यकाल पूरा करने वाले पहले निर्वाचित प्रधानमंत्री बने। 1997-98 के एशियाई वित्तीय संकट से थाईलैंड की मजबूत आर्थिक सुधार के साथ-साथ थाकसिन सरकार द्वारा ग्रामीण गरीबी, नशीली दवाओं के व्यापार, सार्वजनिक स्वास्थ्य को लक्षित करने वाली नीतियों के साथ 2005 के चुनावों में भी जबदस्त समर्थन देखा गया और टीआरटी ने 374 सीटों पर जीत दर्ज की। विपक्ष द्वारा भ्रष्टाचार के आरोप ने थाकसिन को 24 फरवरी 2006 को संसद को भंग करने पर विवश कर दिया और अप्रैल 2006 में मध्यावधि चुनाव कराए गए। हालांकि टीआरटी ने 462 सीटें जीतीं, लेकिन संवैधानिक न्यायालय ने नतीजों को अमान्य घोषित कर दिया क्योंकि टीआरटी पर आरोप लगाया गया था और बाद में इसे संविधान में उल्लिखित 20 प्रतिशत के नियम को पूरा करने के लिए चुनाव लड़ने वाले छोटे दलों को पैसे खिलाने का दोषी भी पाया गया। 15 अक्टूबर 2006 के लिए एक नया चुनाव कराया जाना निर्धारित किया गया था हालांकि इसे रद्द कर दिया गया था क्योंकि 19 सितंबर 2006 को जनरल सोंथी बून्याराटग्लिन के नेतृत्व में शाही थाई सेना ने तख्तापलट कर थाकसिन सरकार को अपदस्थ कर दिया था और इस प्रकार थाईलैंड में पंद्रह वर्षों में पहली बार सरकार में गैर-संवैधानिक परिवर्तन हुआ था। 19 अगस्त 2007 को थाई मतदाताओं ने जनमत संग्रह में नए संविधान को मंजूरी दी। वर्ष 2006 में कराए गए चुनावों में कदाचार का दोषी पाए जाने के कारण टीआरटी पार्टी और थाकसिन के राजनीति में सक्रिए रहने पर प्रतिबंध लगा दिया गया था। टीआरटी ने दिसंबर 2007 में होने वाले चुनावों- तख्तापलट के बाद पहली बार, में लड़ने के लिए स्वयं को पीपुल्स पावर पार्टी (पीपीपी) के रूप में पुनर्गठित किया। सामक सुंदरावेदज के नेतृत्व में, पीपीपी ने संसद की 480 सीटों में से 233 सीटों पर जीत हासिल की और पांच अन्य छोटे दलों के साथ गठबंधन की सरकार बनाई।[78]

पीएम सामक ने 2007 के संविधान में संशोधन करने का संकल्प किया, जिसके बारे में उनका मानना था कि अदालत के आदेश से राजनीतिक दलों को भंग करना आसान हो गया था और इसमें देश के शासन में खतरनाक राजनीतिक शून्यता पैदा करने की क्षमता थी। इसने पीपुल्स अलायंस फॉर डेमोक्रेसी (पीएडी), जिसे थाकसिन-विरोधी अभियायन के तहत 2005 में शुरू किया गया था, को प्रभावित किया। पीएडी ने 25 मई 2008 को प्रधानमंत्री के इस्तीफे की मांग को लेकर बड़े पैमाने पर प्रदर्शन शुरू किया। 26 अगस्त 2008 को पीएडी प्रदर्शनकारियों ने सरकारी टेलीविजन स्टेशन पर धावा बोल दिया और सरकारी संपत्तियों को नुकसान पहुंचाया। इसके अलावा, पीएडी के 10,000 सदस्यों ने राष्ट्रपति भवन परिसर में प्रवेश कर लिया और एक

दिसंबर तक परिसर में ही रहे। प्रदर्शनकारियों ने पीले रंग- राजा का रंग- की टी-शर्ट पहनी हुई थी- अपनी कार्रवाई को सही ठहराने के लिए राजशाही के प्रतीक के रूप में। पीएडी और सरकार के समर्थकों, जिसे यूनाइटेड फ्रंट ऑफ डेमोक्रेसी अगेन्स्ट डिक्टेटरशिप (यूडीड) के रूप में जाना जाता है, के बीच का टकराव गृह युद्ध में न बदल जाए, इस डर से सरकार ने 2 सितंबर को आपातकाल की घोषणा कर दी और सेना को स्थिति पर नियंत्रण करने का अधिकार मिल गया। 9 सितंबर 2008 को संवैधानिक न्यायालय ने फैसला सुनाया कि पीएम सामक ने संविधान के अनुच्छेद 267 का उल्लंघन किया है जिसके कारण उनके पूरे मंत्रिमंडल को इस्तीफा देना पड़ा। सोमचाई वोंगसावत को पीपीपी का नेता चुना गया था और थाकसिन से सीधा संबंध होने के कारण प्रधानमंत्री बनाया गया था। पीएडी ने, थाकसिन की विरासत को मिटाने के अपने मिशन के साथ, सरकार के नेता के रूप में पीपीपी से किसी को भी स्वीकार करने से इनकार करने के साथ सोमचाई सरकार के खिलाफ अपने अभियान को नया रूप दिया। ऐसे में जब पीएम सोमचाई 22-23 नवंबर, 2008 को 16वें एशिया- प्रशांत आर्थिक सहयोग में वित्त मंत्रियों की बैठक में भाग लेने के लिए पेरू में थे, पीएडी ने उन पर इस्तीफा देने का दबाव बनाने के लिए बैंकॉक के सुवर्णभूमि हवाईअड्डे के साथ-साथ ओल्ड डॉन मुअनग हवाईअड्डे पर कब्जा कर लिया। हवाईअड्डे के बंद होने के कारण देश शक्तिहीन हो गया। 26 नवंबर को सेना प्रमुख अनूपोंग को बंधक बना लिए जाने के बाद सरकार को सदन को भंग करने का सुझाव दिया गया। 2 दिसंबर को संवैधानिक न्यायालय ने पीपीपी को भंग कर दिया और सोमचाई पर पांच वर्षों का राजनीतिक प्रतिबंध लगाया गया क्योंकि न्यायालय ने पार्टी और उसके नेताओं को चुनाव में धोखाधड़ी का दोषी पाया।[79]

डेमोक्रेटिक पार्टी जो सत्तारूढ़ गठबंधन का एक हिस्सा थी, उसके नेता अभिसित वेज्जाजीवा को दिसंबर 2008 में संसदीय वोट के माध्यम से प्रधानमंत्री के रूप में चुना गया था। अभिसित की नियुक्ति का यूडीडी ने विरोध किया था जिसने 2009 में बैंकॉक और पटाया में बड़े पैमाने पर विरोध प्रदर्शन किया और देश के कामकाज को पंगु बना दिया। जुलाई 2011 के चुनावों में पीपीपी के समर्थक थाकसिन अनुयायियों, जिन्होंने सितंबर 2008 में फू थाई पार्टी का गठन किया था, ने थाकसिन की सबसे छोटी बहन यिंगलक शिनावात्रा के नेतृत्व में भारी जीत हासिल की। भ्रष्टाचार के आरोपी यिंगलक सरकार को संसद भंग करनी पड़ी और 2 फरवरी 2014 को मध्यावधि चुनाव कराने की घोषणा की गई। मतदान के दिन, एक महीने के बाद इस आधार पर कि 375 वार्डों में से अट्ठाईस वार्डों में, सरकार विरोधी प्रदर्शनकारियों को वोट डालने से रोकने पर, संवैधानिक न्यायालय द्वारा चुनाव परिणाम को रद्द किए जाने के कारण थाईलैंड में सबसे खूनी विरोध प्रदर्शन हुआ। एक ऐसा देश जहां कामकाजी सरकार नहीं थी और कार्यवाहक पीएम यिंगलक भ्रष्टाचार के आरोपों से जूझ रहे थे, ने, आर्मी जनरल प्रयुथ चान-ओ-चा को देश में 20 मई को मार्शल लॉ घोषित करने को प्रेरित किया। प्रधानमंत्री के रूप में काम कर रहे जनरल चान-ओ-चा द्वारा आश्वासन दिया गया था कि राजनीतिक सुधार और चुनाव का पालन किया जाएगा, लेकिन इसके लिए कोई समय-सीमा नहीं दी गई थी।[80] सैन्य तख्तापलट के करीब पांच वर्षों के बाद, थाईलैंड में 2017 में नए संविधान को अंगीकार किए जाने के बाद 23 मार्च 2019 को पहले चुनाव कराए गए। नए संविधान ने चुनाव प्रक्रिया में सुधारों की शुरुआत करते हुए संसदीय चुनावों के संचालन का मार्ग प्रशस्त किया। नए संविधान के अनुसार 500 सदस्यों में से, 350 सदस्यों का चुनाव फर्स्ट-पास्ट-द-पोस्ट सिस्टम के तहत होगा और बाकी के 150 आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर चुने जाएंगे। इसके साथ ही फर्स्ट-पास्ट-द-पोस्ट सिस्टम के तहत चुने जाने वाले 375 सदस्यों और शेष 125 सदस्यों का चयन आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर किए जाने की पिछली प्रणाली समाप्त हो गई।[81]

प्रतिनिधि सभा के सदस्यों के विपरीत, सीनेट के सदस्य जनता द्वारा नहीं चुने जाते हैं। नए संविधान के अनुसार, 250 सदस्य सीटों में से 194 सीनेटरों का चयन वर्तमान सत्ताधारी सैन्य सरकार, जिसे नेशनल

काउंसिल फॉर पीस एंड ऑर्डर (एनसीपीओ) के नाम से भी जाना जाता है, द्वारा किया जाएगा। देश को चलाने के लिए इसका अध्यक्ष नई सैन्य सरकार ने प्रधानमंत्री चान-ओ-चा को बनाया था। सीनेट की शेष छह सीटें सशस्त्र बलों के नेताओं, सुप्रीम कमांडर, रक्षा स्थायी सचिव और राष्ट्रीय पुलिस प्रमुख के लिए आरक्षित थीं। शेष 50 सीनेटरों को विशेष पैनल द्वारा चुना जाता है और इसमें 10 पेशेवर और नौकरशाह, शिक्षक, न्यायाधीश, किसान एवं निजी कंपनियों समेत सामाजिक समूह के लोग होते हैं- जिनका चयन उनकी पृष्ठभूमि की विस्तृत जांच के बाद चुनाव आयोग द्वारा अनुमोदित किए जाने के बाद होता है। 2017 के संविधान में यह भी निर्धारित किया गया है कि नई सीनेट नवनिर्वाचित प्रतिनिधि सभा के साथ बुलाई जाएगी। इसके अलावा, थाईलैंड के अगले प्रधानमंत्री को चुनने में, सदन के सभी 500 सदस्यों के साथ-साथ 250 गैर-निर्वाचित सीनेटर मतदान में शामिल होंगे। इसलिए, संसद के दोनों सदनों में संयुक्त बहुमत प्राप्त करने वाले उम्मीदवार को प्रधानमंत्री चुना जाएगा जो नई सरकार का गठन करेगा।[82]

मार्च 2019 के चुनावों में 500 सीटों वाले निचले सदन में किसी भी पार्टी को बहुमत नहीं मिला, विपक्षी फ्यू थाई पार्टी ने 136 सीटें जीतीं और सेना समर्थक पलांग प्रचा रथ (पीपीआरपी) ने 115 सीटें। चुनाव आयोग द्वारा मतदान के छह सप्ताह के बाद नए संविधान के आधार पर आनुपातिक प्रणाली द्वारा तय की गई शेष 150 सीटों के नतीजों के बाद, पीपीआरपी अपने उम्मीदवार प्रधानमंत्री जनरल चान-ओ-चा को फिर से पदभार देने की अच्छी स्थिति में था।[83]

यह देखते हुए कि सीनेट के 250 सदस्य गैर-निर्वाचित थे और सेना द्वारा उन्हें चुना गया था, 5 जून 2019 को संसद में मतदान हुआ और जनरल चान-ओ-चा को देश का नागरिक प्रधानमंत्री चुना गया था।[84] थाईलैंड के नए संविधान के अलोकतांत्रिक डिजाइन ने विपक्षी दलों को सरकार बनाने से रोक दिया, भले ही उन्होंने बहुमत हासिल की थी। जबकि फ्यू थाई थाईलैंड की सबसे मजबूत विपक्षी पार्टी बनी हुई थी, फ्यूचर फॉर्वर्ड पार्टी (एफएफपी), जो एक विकल्प प्रस्तुत करने वाली नई व्यवस्था-विरोधी ताकत के रूप में संक्षिप्त रूप से उभरी थी, संवैधानिक न्यायलय द्वारा फरवरी 2020 में उसे भंग कर दिया गया और उस पर दस वर्ष का राजनीतिक प्रतिबंध लगा दिया गया।[85]

21 फरवरी 2022 को, संसद द्वारा 10 सितंबर 2022 को पारित संवैधानिक संशोधन बिल को मंजूरी देने वाला एक शाही फरमान जारी किया गया था। 2023 के आम चुनावों में लागू होने वाले संशोधन के अनुसार, प्रतिनिधि सभा के निर्वाचन क्षेत्रों में सीधे चुने गए सांसदों की संख्या 350 से बढ़कर 400 हो जाएगी और सदन में पार्टी की सूची वाले सांसदों की संख्या 150 से घटकर 100 रह जाएगी। चुनावी प्रणाली एकल-मतपत्र प्रणाली से दो-मतपत्र प्रणालीः एक सीट वाले निर्वाचन क्षेत्रों में उम्मीदवारों के लिए एक गुप्त मतदान और मतदाताओं की पंसद के राजनीतिक दल के लिए दूसरा गुप्त मतदान, में बदल जाएगा। [86] ये परिवर्तन फ्यू थाई और पीपीआरपी जैसी बड़ी और बेहतर वित्त पोषित राजनीतिक दलों के पक्ष में होंगे और यह सुनिश्चित करेंगे कि 2023 में कम पार्टियों को संसद में प्रवेश मिले।[87]

दक्षिणपूर्व एशिया में उभरते राजनीतिक रूझान

दक्षिणपूर्व एशिया के सात देशों में उभरती राजनीतिक प्रवृत्तियों की जांच करके यह कहा जा सकता है कि लोकतांत्रिक समेकन की प्रक्रिया के संदर्भ में- इनमें से कुछ देशों में- वास्तविक स्थिति बहुत अलग है। इनमें से कुछ देशों में जिन्होंने लोकतांत्रिक सुधार प्रक्रिया शुरू की थी, के पीछे हटने और असफलताओं के उदाहरण हैं जबकि कुछ ऐसे भी हैं जो सैन्य और सत्तावादी दलों एवं नेताओं द्वारा अपनी स्वयं की अलोकतांत्रिक इच्छा को पूरा करने के साथ धीरे- धीरे राजनीतिक अराजकता की स्थिति में चले गए हैं। हालांकि, सामान्य प्रवृत्ति प्रदेश

में लोकतंत्र को बनाए रखने और कुछ मामलों में सुधार की है। इसके अलावा, इन देशों में विकासशील और शिक्षित मध्यम वर्ग, जिनकी तकनीकी नवाचार और सोशल मीडिया में पहुँच है, के साथ इनके नेताओं की स्वतंत्रता, पारदर्शिता, निर्णय लेने, सशक्त संस्थानों और उत्तरदायित्व की मांग बढ़ रही है।[88]

दक्षिणपूर्व एशिया के इन सात देशों में कुछ सामान्य कड़ियां हैं जो उभरते राजनीतिक संवाद की प्रकृति को समझने में मदद कर सकते हैं। इनमें से कुछ में शामिल हैं, सेना और नागरिक सरकार के बीच संबंधों का संतुलन, जातीय और धार्मिक अल्पसंख्यकों द्वारा मताधिकार से वंचित किए जाने संबंधी मुद्दे, और आर्थिक सुधारों एवं विकास से निपटना। यह पाया गया है कि इनमें से कुछ देशों में एक सबसे महत्वपूर्ण कारक है- असैनिक राजनीति में सेना की निरंतर भागीदारी, जो उनके सफल राजनीतिक परिवर्तन को प्रभावित करता है। इन देशों में, तख्तापलट या तख्तापलट के प्रयास के साथ असैनिक सरकार में सेना का हस्तक्षेप और अलोकतांत्रिक आरोपण ने उनके चल रहे लोकतांत्रिक परिवर्तन को कमज़ोर कर दिया होगा। इसके अलावा, मध्यवर्ती अवधि के दौरान यह पाया गया है कि सेना ने विरोधियों का दमन कर दिया और एक नए संविधान को अंगीकार किया जिसने नागरिक सरकार को और कमजोर बना दिया और घरेलू राजनीति पर अपने(सेना की) नियंत्रण की गारंटी दी। उभरती प्रवृत्तियां लोकतंत्र समर्थक नेटवर्कों के दमन का भी संकेत देती हैं जो भविष्य में देश में अधिनायकवाद को और गहरा कर सकती हैं। दक्षिणपूर्व एशियाई देशों में लोकतांत्रिक परिवर्तन की प्रक्रिया का अध्ययन करने के राजनीतिक दलों, ट्रेड यूनियनों, छात्रों और धार्मिक संगठनों द्वारा किए गए विरोध, हड़तालों और सड़क पर प्रदर्शनों द्वारा बड़े पैमाने पर किए गए आंदोलनों का पता चलता है। ये जातीय और धार्मिक अल्पसंख्यक दमन के मुद्दों के अलावा और सत्तावादी एवं दमनकारी शासन के खिलाफ सामाजिक-आर्थिक असमानताओं को दूर करने के लिए किए गए थे। क्षेत्रीय और सामाजिक- आर्थिक असमानता का अस्तित्व भविष्य में और असंतुलन को बढ़ा सकता है और जारी लोकतांत्रिक प्रक्रिया में भी रूकावटें डाल सकता है। प्रमुख सामाजिक- आर्थिक चुनौतियों को दूर करने में सरकार की विफलता के कारण राजनीतिक व्यवस्था के प्रति व्यापक स्तर पर मोहभंग होता है। जनता के विश्वास को हुए इस नुकसान के बदले लोकप्रिय दलों, आंदोलनों और नेताओं का उदय होता है जिसके उदाहरण दक्षिण पूर्व एशिया के कुछ देशों में देखे जा रहे हैं। जातीय और धार्मिक आधार पर बढ़ते ध्रुवीकरण समेत राष्ट्रीय राजनीतिक व्यवस्था पर इनके अनेक परिणाम देखे जा सकते हैं। मलेशिया में, यूएमएनओ के नेतृत्व वाला गठबंधन, 1957 में मिली स्वतंत्रता के बाद से 2018 तक सत्ता में बना रहा और फिर तीन वर्षों के बाद 2021 में एक बार फिर से सत्ता में इसकी वापसी हुई। इसने जीतने और समर्थन बनाए रखने के लिए जाती के आधार पर ध्रुवीकरण का प्रयोग किया था। इस बीच, इंडोनेशिया ने इस्लामवादी और अधिक बहुलतावादी ताकतों के बीच राजनीतिक विभाजन देखा जो पिछले दशक में और अधिक स्पष्ट हो जाता है।

हालांकि धार्मिक और जातीय आधार पर ध्रुवीकरण इन अधिकांश दक्षिण पूर्व एशियाई देशों में सबसे आम पाया गया है, लेकिन इनमें विचारधाराओं में भी भिन्नता पाई जा रही है। थाईलैंड के मामले में, शाही राष्ट्रवादी खेमा है जो राजशाही की राजनीतिक अधिकारों का बचाव करता है जबकि विपक्ष अधिक लोकतांत्रिक और समतावादी राजनीति की मांग करता है। धर्म, जातीय और वैचारिक आधार पर ध्रुवीकरण न केवल लोकतांत्रिक प्रक्रिया को प्रभावित करता है बल्कि विकास के एजेंडे को भी बाधित करता है जिससे सामाजिक- आर्थिक असमानताएं और बढ़ जाती हैं। इस प्रकार, दीर्घकाल में लोकतंत्र और विकास दोनों प्रभावित होंगे।

दक्षिणपूर्व एशिया में राजनीतिक विमर्श को आकार देने वाले कारक

ऐसे में जबकि कुछ दक्षिणपूर्व एशियाई देशों में लोकतांत्रिक परिवर्तन की प्रक्रिया जारी है, कुछ ऐसे कारक भी हैं जो राजनीतिक आख्यानों को आकार देते हैं। राजनीतिक विमर्श के संबंध में 21वीं सदी नई चुनौतियां प्रस्तुत करती है। बढ़ती चरमपंथी गतिविधियों द्वारा चिन्हित 9/11 के बाद की अवधि दक्षिण पूर्व एशियाई देशों में वर्तमान सामाजिक- धार्मिक ताने-बाने में अलगाव लाती है। इसके अलावा, 2008 के वैश्विक वित्तीय संकट के बाद पूरे दक्षिण पूर्व एशिया में महसूस की गई आर्थिक मंदी के साथ-साथ इस क्षेत्र में चीन की बढ़ती मुखरता ने दक्षिण पूर्ण एशिया की सामाजिक- आर्थिक सुरक्षा को प्रभावित किया है; और राजनीतिक असंतुलन पैदा कर रहा है (जोर दिया गया)।[89] कोविड-19 महामारी के कारण आर्थिक गिरावट इस क्षेत्र में सामाजिक-आर्थिक असमानता को बढ़ा रहा है। यह दक्षिण पूर्व एशिया में जारी लोकतांत्रिक परिवर्तन के लिए, जहां देश पहले से ही जातीय और धार्मिक मतभेदों से पैदा हुई वर्तमान सामाजिक और राजनीतिक अशांति को दूर करने का प्रयास कर रहे हैं, अतिरिक्त चुनौती है। फिर यह उन देशों की राजनीतिक स्थिरता के लिए संकट पैदा कर सकता है जो पहले से ही संस्थागत कमज़ोरी का सामना कर रहे हैं या जिनमें इन चुनौतियों का सामना करने की क्षमता सीमित है। अस्थिर और कमज़ोर घरेलू राजनीतिक माहौल राष्ट्रीय नेताओं को अपने नीतिगत नजरियों में अधिक रूढ़िवादी और सतर्क होने को विवश करता है। यह, बदले में, क्षेत्र में उभरती सुरक्षा चिंताओं को दूर करने की उनकी क्षमता को प्रभावित करता है।[90]

बाहरी कारकों के साथ-साथ दक्षिणपूर्व एशिया में व्याप्त आंतरिक कलह वर्तमान सामाजिक- आर्थिक असमानताओं और बड़े राजनीतिक माहौल के लिए खतरा है। यह खंड दक्षिणपूर्व एशिया में लोकतांत्रिक परिवर्तन को आकार दे रहे कुछ प्रमुख आंतरिक और बाहरी कारकों के बारे में बताएगा।

आंतरिक कारक

दक्षिणपूर्व एशिया में, इंडोनेशिया के आचे और पापुआ से लेकर फिलीपींस के मिंडानाओ और थाईलैंड के दक्षिणी छोर के तीन प्रांतों तक, सभी संघर्ष मुख्य रूप से अंतर-राज्यीय है और ज्यादातर सीमांत और सीमावर्ती क्षेत्रों तक सीमित हैं। फिलीपींस और थाईलैंड में जारी संघर्ष लंबे समय से चली आ रही असमानताओं, जिसके कारण सामाजिक तनाव बढ़ा है, के बीच की कड़ी को दर्शाते हैं। फिलीपींस में मुस्लिम मिंडानाओ के स्वायत्त क्षेत्र (ऑटोनोमस रीजन ऑफ मुस्लिम मिंडानाओ/ एआरएमएम) के स्वायत्त क्षेत्र में पिछड़ेपन का मुद्दे तनाव और हिंसक संघर्ष का कारण बना। वर्ष 1972 में मिंडानाओ में मोरो नेशनल लिबरेशन फ्रंट या एमएनएलएफ की स्थापना की गई थी, यह मोरो अलगाववादियों का प्रमुख संगठन है। वर्ष 1996 में, एमएनएलएफ ने फिलीपींस सरकार के साथ ऐतिहासिक शांति समझौते पर हस्ताक्षर किया, इससे एआरएमएम का गठन हुआ जिसमें मुख्य रूप से मुस्लिम आबादी को कुछ सीमा तक स्वशासन का अधिकार प्राप्त है।

नूर मिसुआरा को प्रदेश का गवर्नर बनाया गया था लेकिन नवंबर 2001 में जब उन्होंने फिलीपींस की सरकार के खिलाफ एक असफल विद्रोह का नेतृत्व किया तब उन्हें पद से हटा दिया गया।[91] मोरो इस्लामिक लिबरेश फ्रंट (एमआईएलएफ) जिसने बंगसमोरो में अधिक स्वायत्तता की कल्पना की थी, 1970 के दशक से ही हिंसक उग्रवाद के जरिए सक्रिए था। जनवरी 2019 में, एआरएमएम के निवासियों ने बंगसमोरो ऑर्गेनिक लॉ (बीओएल) को अंगीकार करने के लिए भारी मतदान किया। इसने मुस्लिम मिंडानाओ में बंगसमोरो ऑटोनोमस रीजन (बंगसमोरो स्वायत्त क्षेत्र/ बीएआरएमएम) को बनाए जाने का मार्ग प्रशस्त किया और इसने पूर्व के एआरएमएम की जगह ले ली। बीएआरएमएम को बंगसमोरो ट्रांजिशनल अथॉरिटी (बीटीए) के हिस्से के रूप में एमआईएलएफ, एमएनएलएफ और वर्तमान एआरएमएम के अधिकारियों के गठबंधन के माध्यम से कार्यान्वित

किया जाएगा। मिंडानाओ में बड़े पैमाने पर गरीबी और मोरो लोगों के प्रतिनिधित्व की कमी के कारण राजनीतिक हिंसा का एक लंबा इतिहास रहा है।[92]

सामाजिक- आर्थिक और राजनीतिक अस्थिरता की इस पृष्ठभूमि में, इसने इस क्षेत्र में आतंकवाद के लचीलेपन को जन्म दिया है जिसके कारण 400,000 लोग अपने घरों से भाग गए सरकारी सेना और एमआईएलएफ के बीच लड़ाई बढ़ गई थी। मोरो लोगों के साथ लंबे समय से चल रहे टकराव को दूर करने में फिलीपींस की सरकार की विफलता ने इस्लामिक स्टेट (आईएस) और उसके क्षेत्रीय साझीदारों जैसे अबू सय्यफ ग्रुप (एएसजी) और माउट ग्रुप, मिंडानाओ में आंतकवाद के मुख्य घटक हैं, जैसे अंतरराष्ट्रीय आतंकवादियों के लिए अवसर पैदा किए हैं।[93] उदाहरण के लिए, 2017 में मरावी की घेराबंदी में न केवल कई फिलिपिनो इस्लामिक स्टेट के सहयोगी शामिल हुए बल्कि इंडोनेशिया और मलेशिया के विदेशी लड़ाके भी शामिल हुए।[94]

थाईलैंड में, गांवों और इस्लामी समुदायों में असमानता मौजूद है। दोनों के पास अपनी- अपनी शिकायतें हैं, और मुस्लिम-बहुल दक्षिणी थाईलैंड में केंद्रित विद्रोहियों और ग्रामीण गरीबों का प्रतिनिधित्व करने वाले मार्च 2010 के 'रेड शर्ट्स' विरोध में स्पष्ट रूप से नज़र आता है। थाईलैंड के सामाजिक विकास मंत्रालय और यूएनडीपी की रिपोर्ट के अनुसार, मुख्य रूप से गरीबी थाईलैंड के उत्तरी, उत्तरपूर्वी और दक्षिणपूर्व इलाकों में है। मुस्लिम-केंद्रित ग्रामीण डीप साउथ को दोहरी मार झेलनी पड़ती है क्योंकि इस इलाके में सबसे अधिक ग्रामीण गरीब रहते हैं।[95] डीप साउथ जिसमें याला, पट्टानी और नरथिवाट- तीन प्रांत आते हैं, में बहुसंख्यक मलय-मुस्लिम आबादी है और इसकी सीमा मलेशिया से लगती है। एक आर्थिक सर्वेक्षण में पाया गया कि करीब 15 प्रतिशत स्थानीय मलय- मुसलमान बेरोज़गार हैं और एक-तिहाई से अधिक आबादी उचित रूप से शिक्षित नहीं है। मलय-मुसलमानों की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने में थाई सरकार की विफलता ने स्थानीय लोगों के असंतोष को बढ़ा दिया है जिससे सरकार के प्रति अलगाववादियों के विद्रोह को हवा मिली है।[96]

जातीय आधार पर ध्रुवीकरण भी दक्षिणपूर्व एशियाई देशों में लोकतंत्रीकरण की प्रकृति को प्रभावित करता हुआ प्रतीत होता है। वर्ष 1998 के मध्य में सुहार्तो के इस्तीफे और स्वतंत्रता के मुद्दे पर जनमत संग्रह कराए जाने के पूर्वी तिमोर की सफल मांग के बाद इंडोनेशिया में इरियन जया में अलगाववादी आशाओं को बढ़ा दिया। राष्ट्रपति अब्दुर्रहमान वाहिद ने प्रांत का नाम बदलकर पापुआ करने के लिए जातीय संघर्ष और अलगाववादी मांग के सवाल पर अधिक उधार और सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील दृष्टिकोण का परिचय दिया। इसके अलावा, 2001 में राष्ट्रीय संसद द्वारा अधिनियमित कानून 21/2001 के जरिए, पापाऊ को विशेष स्वायत्तता प्रदान की गई थी। वर्ष 2003 में, विशेष स्वायत्तता के लिए बदलाव पूरा होने से पहले, केंद्र सरकार ने पापुआ को दो प्रांतों-पापुआ- जिसकी राजधानी बनाई जयापुरा को और पश्चिम पापुआ जिसकी राजधानी मानोकवारी को बनाया गया, में बांट दिया। केंद्र सरकार द्वारा विशेष स्वायत्तता और अधिक वित्त पोषण कर अलगाववादी तनाव को शांत करने के प्रयासों के बावजूद व्यापक धारणा यह है कि पापुआ में विकास की प्रक्रिया असफल रही।[97]

1965 में मनोकवरी में एक स्थानीय आंदोलन के रूप में उभरे आग्रेनिससी पापुआ मर्डेका (ओपीएम) या फ्री पापुआ ऑर्गेनाइज़ेशन की अपनी सैन्य शाखा, टेंटारा पेम्बेबासन नेशनल पापुआ बराट (टीपीएनपीबी) है, इंडोनेशियाई सेना के खिलाफ छोटे-मोट युद्ध लड़ती रहती है क्योंकि इसका मानना है कि इंडोनेशिया की सेना ने पश्चिमी पापुआ पर अवैध रूप से कब्ज़ा कर रखा है। पापुआ में वर्तमान समय के संघर्षों में प्राकृतिक संसाधनों पर विवाद और आर्थिक एवं राजनीतिक शक्ति संघर्ष एवं विभिन्न जातीय, धर्म और आप्रवासियों एवं स्थानीय लोगों के बीच का संघर्ष भी शामिल है।[98]

विस्थापन और हाशिए पर छोड़े जाने के एहसास ने भी पापुआ की नाराज़गी और स्वतंत्रता का सतत आह्वान किया है। पापुआ के लोगों का आक्रोश का प्रसार न केवल वंचित नस्ल की भावना पर आधारित है बल्कि स्वदेशी अधिकारों और पारंपरिक भूमि एवं संसाधनों पर अतिक्रमण से संबंधित शिकायतों का एक विशिष्ट समूह है।[99] पापुआ में अलगाववादी आंदोलन ने विकास को गति देने के लिए केंद्र सरकार की क्षमता पर निराशावाद और अविश्वास पैदा करने के लिए पापुआ के समुदायों की दुर्दशा का फायदा उठाया है। मलेशिया में, मलय, जो सबसे बड़ा जातीय समूह है और आबादी का 50.8 प्रतिशत भी, पिछले दो दशकों में उभरती सामाजिक- आर्थिक असमानताओं ने गहरे राजनीतिक ध्रुवीकरण के लिए माहौल तैयार किया है। अपनी स्वतंत्रता के बाद से ही राष्ट्रीय पहचान का प्रमुख आख्यान जातीयता में निहित रहा है। इसके अलावा, 1997 से जातीय समुदायों के बीच बढ़ती आर्थिक असमानताओं ने जातीय- राष्ट्रवादी अपीलों के समर्थन को बढ़ावा दिया है। नीचे के 40 प्रतिशत माने जाने वालों का एक बड़ा हिस्सा आर्थिक रूप से असुरक्षित है और इसमें मलय और पूर्वी मलेशिया के लोग आते हैं। इस आर्थिक असमानता और असुरक्षा का इस्तेमाल अक्सर राजनीतिक अभिजात वर्ग ने अपने फायदे के लिए किया है। आर्थिक असमानताओं को दूर करने में विफलता के कारण फरवरी 2020 में पीएच और अगस्त 2021 में पीएन का पतन हुआ। इससे इस बात का पता चलता है कि कैसे राजनीतिक अभिजात वर्ग आर्थिक असुरक्षाओं का लाभ उठाने में सक्षम है। जाति के अलावा अन्य प्रमुख कारक जैसे धर्म और 1970 के दशक के उत्तरार्ध में इसकी बढ़ती भूमिका ने सांप्रदायिक खाई को चौड़ा किया और इस्लामवादी-धर्मनिरपेक्ष अंतर को भी बढ़ाया है। गठबंधन सरकारों, जिनकी प्राथमिकता देशी की चुनौतियों का समाधान करने हेतु नीतिगत समाधान ढूंढ़ने की बजाए राजनीतिक अस्तित्व को बचाना रहा है, में ये ध्रुवीकरण और अस्थिरता का कारण रहे हैं।[100]

आंतरिक स्तर पर विस्थापितों (आईडीपी) के मामले में दक्षिणपूर्व एशिया में सबसे बड़ी सापेक्ष बढ़ोतरी देखी गई, जो सुरक्षा चुनौतियों को बढ़ाने वाला एक अन्य कारक है। अराकान रोहिंग्या साल्वेशन आर्मी (एआरएसए) ने हाल के वर्षों में म्यांमार-बांग्लादेश सीमा क्षेत्रों में अपनी गतिविधियां बढ़ा दी हैं। हालांकि परिचालन क्षमता के लिहाज से अराकान आर्मी (एए), जिसका नवंबर 2018 से म्यांमार की सेना से संघर्ष चल रहा है, की तुलना में एआरएसए से खतरा निम्न स्तर का है। पश्चिमी म्यांमार ने 2020 में राखिन राज्य और सीमावर्ती दक्षिणी चिन राज्य में एए और सरकार की सेना के बीच कई हिंसक झड़प देखे हैं। वर्ष 2018 के बाद से अब तक 226,000 से अधिक लोगों के विस्थापन के साथ बढ़ती झड़पों ने राखिन राज्य में बढ़ते मानवीय संकट की आशंका जताई है। राखिन राज्य में घातक हिंसा के बाद 2017 से अब तक कम- से- कम 730,000 रोहिंग्या बांग्लादेश पलायन कर चुके हैं। बढ़ते संघर्ष के कारण वर्तमान में बांग्लादेश में रह रहे दस लाख से अधिक रोहिंग्या शरणार्थियों के सुरक्षित प्रत्यावर्तन के लिए नई अनिश्चितताएं भी पैदा हुई हैं। म्यांमार में चल रहे राजनीतिक संकट के साथ- साथ कोविड-19 महामारी जैसे कारकों के कारण प्रत्यावर्तन प्रक्रिया भी ठप हो गई है।[101]

म्यांमार में, सरकारी अधिकारियों ने आंतरिक विस्थापन की बात या गंभीरता को बहुत कम मान्यता दी और अन्य राष्ट्रीय या अंतरराष्ट्रीय नेताओं को आईडीपी के साथ जुड़ने से मना कर दिया। चूंकि विस्थापन के कारण उनकी सामान्य आजीविका अव्यवस्थित हो चुकी थी इसलिए आईडीपी विशेष रूप से आय और खाद्य सुरक्षा के मामले में कमजोर थे। वास्तव में, अधिकांश विस्थापित आबादी विस्थापन के भी पहले से गरीबी रेखा के नीचे गुजर- बसर कर रहे थी और विस्थापन के कारण उन्हें स्थिर आजीविका तो नहीं ही मिल पा रही थी, वे पहले से भी अधिक गरीब हो गए थे। भोजन और रोज़गार के अवसरों तक पर्याप्त पहुंच के बिना, आईडीपी (आंतरिक रूप से विस्थापित लोग) विद्रोहियों द्वारा भर्ती का आसान लक्ष्य बन जाते हैं और संघर्ष पीड़ित से हानि पहुंचाने

वाले अपराधी बन जाते हैं।[102] सामाजिक और मानवीय संकट के कारण सुरक्षा कमियों के लोकतांत्रिक समेकन को प्रभावित करने की संभावना है। प्रमुख सामाजिक- आर्थिक चुनौतियों को दूर करने में सरकार की विफलता राजनीतिक व्यवस्था से व्यापक मोहभंग की ओर ले जाती है। जनता के विश्वास को हुए इस नुकसान से दक्षिण पूर्ण एशिया में अक्सर लोकलुभावन पार्टियों, आंदोलनों और नेताओं का उदय देखा गया है। अलग- अलग पद्धतियों में बढ़ते ध्रुवीकरण के साथ इसके राष्ट्रीय राजनीतिक व्यवस्था पर कई प्रकार के परिणाम देखे जाएंगे।[103]

बाहरी कारक

उभरते क्षेत्रीय और वैश्विक विकास जिसमें बढ़ते भू-राजनीतिक तनाव, उभरते और जटिल सुरक्षा माहौल और जारी संघर्ष शामिल हैं जो महामारी के बाद स्थिति को सामान्य बनाने की प्रक्रिया के बीच बढ़ते मुद्रास्फीति के दबाव को भी बढ़ा रहे हैं। बाहरी कारक होते हुए भी यह वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था पर दबाव बढ़ाता है। दक्षिणपूर्व एशियाई देशों में लोकतांत्रिक प्रक्रिया को आकार देने वाली कुछ प्रमुख बाहरी चुनौतियों की पड़ताल इस प्रकार की जा रही हैः

मुखर चीन

1990 के दशक से दक्षिणपूर्व एशिया में सुरक्षा के माहौल में बहुत बदलाव आया है क्योंकि बाहरी शक्तियां दक्षिण पूर्ण एशिया में बहुत कम सक्रिए थीं। प्रमुख प्रभावशाली देशों द्वारा सत्ता की राजनीति के लिए क्षेत्र को बंधक बनाने के साथ दक्षिण पूर्व एशिया में चीन के बढ़ते प्रभाव ने कुछ सुरक्षा चिंताओं को पैदा किया है। 9/11 के बाद के वर्षों में चीन के खतरे ने दक्षिण पूर्व एशिया में प्रभावशाली देशों के बीच प्रतिद्वंद्विता को तेज कर दिया है और यह क्षेत्र के विकास और समृद्धि को प्रभावित कर रहा है।[104] चीन की विशाल सामर्थ्य क्षमता, उसकी अप्रकट विस्तारवादी महत्वाकांक्षाएं एवं तेजी से मुखर होती विदेश नीति चिंता का कारण है क्योंकि यह क्षेत्रीय और वैश्विक सुरक्षा के लिए खतरा है। अपने भूगोल, ऐतिहासिक, आर्थिक संबंधों और पूरे क्षेत्र में रहने वाले 30 मिलियन चीनी लोगों के कारण दक्षिण पूर्व एशिया में चीन के नीति निर्माण में दक्षिणपूर्व एशिया महत्वपूर्ण स्थान रखता है। दक्षिण पूर्व एशिया में सुरक्षा संबंधी अनेक चुनौतियों के बीच दक्षिण चीन सागर (एससीएस) के विवादित दल क्षेत्र पर समुद्री और क्षेत्रीय विवाद सबसे बड़ी चुनौती है जिसने वाशिंगटन के "पिवट टू एशिया (एशिया का केंद्र)" के बाद बीजिंग के सैन्य आधुनिकीकरण को बढ़ावा दिया। चूंकि चीन की घनी आबादी वाले दक्षिण क्षेत्रों और बंदरगाहों के लिए समुद्र एक प्राकृतिक सुरक्षा कवच की भूमिका निभाता है; आर्थिक विकास पर बीजिंग का पारंपरिक जोर अब तेजी से राजनीतिक और सुरक्षा मुद्दों पर अधिक राष्ट्रवादी रूख पर है।[105]

चीन के उदय और क्षेत्र में इसकी बढ़ती सक्रियता के साथ इसने अन्य बाहरी शक्तियों को इस इलाके में अपनी गतिविधियों का विस्तार करने को प्रेरित किया है। एससीएस में चीन की एकतरफा कार्रवाइयों के साथ- साथ निवेश और सहायता के रूप में या बेचने के लिए हथियारों की पेशकश के माध्यम से इस क्षेत्र में सहयोगियों एवं संभावित सहयोगियों के साथ अपने संबंधों को सुधारने और उसमें विस्तार करने की कोशिश, चीन और दक्षिण पूर्व एशिया के कई देशों के बीच तनाव को बढ़ावा दे रहा है। कई दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ चीन के समुद्री विवादों ने सशस्त्र संघर्ष की बढ़ती संभावना या समुद्री शिपिंग लेन पर नकारात्मक प्रभाव के कारण चिंता बढ़ा दी है। हालांकि एससीएस को लेकर चीन के साथ तनाव हमेशा रहा है, लेकिन आज यह जिस स्तर पर पहुँच गया है, वहां पहले कभी नहीं था। चीन द्वारा स्व-घोषित समुद्री सीमा के अनुसार- 'नाइन-डैश-लाइन'- पैरासेल और स्प्राटली द्वीप चीन की समुद्री सीमा में आते हैं। दक्षिणपूर्व एशिया के चार देशों का चीन के साथ

एससीएस के क्षेत्रीय और समुद्री सीमा विवाद चल रहा है। मलेशिया और फिलीपींस स्प्राटली द्वीप के कुछ हिस्से पर अपना दावा कर रहे हैं जबकि ब्रुनेई निकटवर्ती समुद्री क्षेत्र पर अपने अधिकार का दावा करता है। एससीएस में चीन और वियतनाम का सबसे बड़ा विवाद पैरासेल और स्प्राटली द्वीपों को लेकर है। पैरासेल द्वीपों पर विवाद- वियतनाम और चीन के बीच का द्विपक्षीय विवाद है जबकि स्प्राटली पर विवदा में आसियान के अन्य तीन सदस्य देशों के अलावा ताइवान भी शामिल है।[106]

2010 के बाद से, एससीएस में संप्रभुता संबंधी विवाद बढ़ते गतिरोधों के कारण बढ़ गया है जिसमें दावेदारों में से कुछ की नौसेनाओं द्वारा मछली पकड़ने वाले जहाजों पर फायरिंग जैसे कम तीव्रता वाले कार्य शामिल हैं। इसके अलावा, क्षेत्र में अपनी सैन्य उपस्थिति बढ़ाने के लिए चीन की एकतरफा कार्रवाई में एससीएस में नए सैन्य ठिकानों का बनाया जाना शामिल है। यह एक बड़ी चुनौती बन गया है क्योंकि यह क्षेत्रीय शांति और स्थिरता को प्रभावित करता है।[107] एससीएस में समुद्री सीमाओं के सीमांकन पर विवाद, जो हाल के वर्षों में क्षेत्र में विवादित दल पर चीन के अडिग संप्रभुता के दावों का गवाह रहा है, को, चीन के निरंतर सैन्य आधुनिकीकरण और बढ़ते आर्थिक दबदबे से बढ़ावा मिला है। इन दो कारकों का संयोजन क्षेत्रीय सुरक्षा संरचना के समग्र विन्यास को बदल रहा है।[108]

इस प्रकार, एक सैन्य शक्ति के रूप में चीन का तेजी से विकास और एससीएस में इसकी नए सिरे से गतिविधियां बढ़ते सैन्य खर्च, हथियारों के अधिग्रहण और दक्षिणपूर्व एशियाई देशों, जो जारी विवाद का हिस्सा हैं, के बीच जबरदस्ती तैनाती के प्रमुख कारकों में से एक है। उदाहरण के लिए, इंडोनेशिया का बढ़ता रक्षा खर्च एससीएस में बढ़ते तनाव से प्रेरित है भले ही वह एससीएस में स्प्राटली और पैरासेल द्वीपों में से किसी के भी क्षेत्रीय या समुद्री दावों का पक्षकार नहीं है। नाइन-डैश लाइन्स के आधार पर एससीएस पर चीन का दावा नतुन द्वीप समूह के बहुत करीब है और यह इंडोनेशिया के लिए चिंता का कारण है क्योंकि हाल के वर्षों में इंडोनेशियाई नौसेना ने अतिव्यापी क्षेत्र में प्रवेश करने वाले चीनी जहाजों को पकड़ने की संख्या में रिकॉर्ड वृद्धि हुई है। जुलाई 2017 में, इंडोनेशिया के अधिकारियों ने घोषणा की कि उन्होंने एससीएस के सुदूर दक्षिण छोर पर स्थित नतुन द्वीप समूह के उत्तर-पूर्व के जलक्षेत्र का नाम बदलकर 'नॉर्थ नतुन सी/ उत्तरी नतुन सागर' कर दिया है।[109]

एक अतिरिक्त क्षेत्रीय राष्ट्र से यह खतरा दक्षिणपूर्व एशिया के देशों द्वारा सैन्य अधिग्रहण में वृद्धि के प्रमुख कारकों में से एक रही है। अधिग्रहित किए जा रहे सैन्य उपकरणों में से लड़ाकू विमान, पनडुब्बी रोधी युद्धक विमान, वायु रक्षा प्रणाली, तटीय रक्षा प्रणाली, पनडुब्बियां और सतह से सतह पर मार करने वाले प्रमुख लड़ाकू जहाज शामिल हैं। इस प्रकार के हथियारों का आंतरिक संघर्षों या पुलिस के कार्यों या आपदा राहत में कोई काम नहीं है। इसके अलावा, टैंकर विमान, बड़े और लंबी दूरी तक मार करने वाले लड़ाकू विमान, हवा-से-जमीन पर लंबी दूरी तक मार करने वाली मिसाइलें, बड़ी पनडुब्बियां और सतह पर रह कर जंग लड़ने वाले जहाजों के साथ एम्फिबियस असॉल्ट लैंडिग शिप्स (जल-थल-चर हमला करने वाले लैंडिंग जहाजों) का अधिग्रहण, किसी भी दूसरे देश से संभावित खतरे, चाहे वह अपने देश से कितना ही दूर क्यों न हो, से निपटने की क्षमता तैयार करने की रणनीति के साथ- साथ दूसरे देश पर हमला करने की क्षमता या व्यापार मार्गों या कच्चे माल के स्रोत जैसे सुदूर हितों की रक्षा करने का संकेत देता है।[110]

एससीएस के सामरिक महत्व को देखते हुए, इसने व्यक्तिगत दावों का बचाव किया है जिसके परिणामस्वरूप चीन और कुछ दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के बीच कम तीव्रता का गतिरोध हुआ है। आसियना ने एससीएस पर घोषणापत्र जारी कर संयम बरतने का आह्वान किया है। इस घोषणापत्र ने एकीकृत आसियान स्थिति सुनिश्चित

की जिसमें शांतिपूर्ण तरीकों से विवादों के समाधान के साथ-साथ सेना का प्रयोग न करना शामिल था।[111] आसियान के सदस्य देशों ने हालांकि आचार संहिता (सीओसी) के व्यापक लक्ष्यों को प्राप्त करने पर सहमति दिखाई है लेकिन वास्तविकता यह है कि यह मुख्य विवादों को पूरी तरह से हल करने में मदद नहीं करेगा। समूह की आधिकारिक स्थिति यह है कि अराजकता से बचने के लिए क्षेत्र-व्यापी विश्वास को बढ़ावा देने के लिए सीओसी एक आवश्यक शर्त है और यह तनाव बढ़ने के संकट से बचने में भी मदद करता है।[112]

वर्ष 2009 में चीन के नाइन-डैश-लाइन मानचित्र के प्रकाशित होने के बाद से, बीजिंग ने अपने दावों को पूरा करने की अपनी क्षमता और मंशा दोनों का प्रदर्शन किया है।[113] राष्ट्रपति शी जिनपिंग के नेतृत्व में, चीन की एससीएस नीति में- अपने पूर्ववर्ती के एससीएस यथास्थिति को न मानने से लेकर अपने मूल हितों को पहले से भी अधिक सख्ती के साथ पूरा करने पर जोर देने के साथ बड़ा समायोजन किया गया है। शी का नया नज़रिया एससीएस के बदले हुए सुरक्षा माहौल के जवाब में अधिक मुखर है जिसमें बाहरी देशों का भारी हस्तक्षेप, अपने दावेदारों के पीछे अधिक समन्वित आसियान रुख और यूएनसीएलओएस नियमों और मानदंडों का पालन करने के लिए चीन पर बढ़ता अंतरराष्ट्रीय दबाव भी शामिल है। चीन संकट प्रबंधन के तंत्र के रूप में बहुपक्षवाद को अस्वीकार नहीं करता है- जैसा कि आसियान के साथ चल रहे सीओसी जुड़ाव से पता चलता है- हालांकि, यह संप्रभुता संकल्प की मांग में द्विपक्षीयता पर जोर भी देता है। हालांकि एससीएस में सीओसी का जल्द परिणाम के लाभ हैं जो गतिरोध से बचने और सभी पक्षों को अपनी सीमाओं को बढ़ाने से रोकने में मदद करेंगे, एक पारस्परिक रूप से स्वीकार्य सीओसी तैयार करना चुनौती बनी हुई है। कुछ आसियान देश चाहते हैं कि सीओसी चीन की संप्रभुता के दावों, जो कि इसके नाईन-डैश-लाइन पर आधारित है, पर ध्यान दें। दूसरी तरफ, बीजिंग ईईजेड सीमांकन और नाईन-डैश-लाइन के मुद्दे पर विचार करने के खिलाफ है, जो उनके अनुसार सीओसी को एक शून्य-संचय खेल (ज़ीरो- सम गेम) बना देगा।[114]

एससीएस में चल रहे प्रतिस्पर्धी दावे एक अस्थिर कारक बन रहे हैं क्योंकि यह लोकलुभावन नेताओं के उदय को प्रोत्साहित करता है जो अपने घरेलू राजनीतिक एजेंडे को बनाने के लिए चीन द्वारा उत्पन्न सुरक्षा खतरों का उपयोग करके अपनी 'मजबूत' साख को बढ़ावा देने की कोशिश कर रहे हैं।[115] चीन की समुद्री जिद्द जैसे मछली पकड़ने के परंपरागत मैदानों तक मछुआरों की पहुंच को रोकना और मछली पकड़ने वाले जहाजों पर गोलीबारी करना; न केवल दक्षिणपूर्व एशियाई देशों के राष्ट्रीय हित को खतरा है जो चल रहे विवादों का हिस्सा हैं, बल्कि यह उनकी राजनीतिक व्यवस्था में भी असमानता पैदा करता है। राष्ट्रीय हित और सुरक्षा के लिए खतरा अक्सर फ्लैग इफेक्ट के प्रभाव के इर्द-गिर्द एक रैली को ट्रिगर करता है जो वर्तमान नेता के लिए सार्वजनिक समर्थन बढ़ाता है। वैकल्पिक रूप से, नेता राष्ट्र की सुरक्षा और अंतर्राष्ट्रीय स्थिति को बनाए रखने के लिए एक विशेष क्षमता दोने का दावा करके अपने अधिकार को वैध बनाने का प्रयास कर सकते हैं। राजनीतिक नेता उन नीतियों के लिए प्रचार की मांग करेंगे, जिनके बारे में उनका मानना है कि वे उनके घरेलू राजनीतिक समर्थन को बढ़ावा देंगी, जबकि अलोकप्रिय नीतियों को बढ़ावा देंगी, जो सार्वजनिक विरोध को बढ़ा सकती हैं। राष्ट्रपति जोकोवी ने नतुन द्वीप समूह के आसपास इंडोनेशियाई जलक्षेत्र में चीनी हस्तक्षेप के कारण नतुन जलक्षेत्र में इंडोनेशिया के नौसैनिक जहाज पर एक सीमित कैबिनेट बैठक आयोजिक की; जनता का समर्थन जुटाने के लिए एक अच्छी तरह से प्रचारित घटना के रूप में देखा जाता है।

इसने इंडोनेशियाई सरकार को अपने क्षेत्रीय विवादों से निपटने की किसी भी आलोचना को टालने में सक्षम बनाया। इसके अलावा, सार्वजनिक सर्वेक्षणों में जोकोवी की अनुमोदन रेटिंग को बढ़ावा देने का वांछित प्रभाव था, जो दर्शाता है कि 67 प्रतिशत ने उनकी कार्रवाई का समर्थन किया और माना कि वह इंडोनेशिया के क्षेत्र की रक्षा के लिए प्रतिबद्ध थे।[116] यह देखते हुए कि दक्षिण पूर्व एशिया में राजनीतिक प्रतिस्पर्धा अधिक बनी

हुई है, एसीसएस में चल रहा तनाव अक्सर एक ऐसा उपकरण बन जाता है जिसका उपयोग राज्य के अभिजात वर्ग अपनी राजनीतिक स्थिति को बनाए रखने के लिए करते हैं। इसलिए, चीन का बढ़ता खतरा और एसीसीएस में इसकी मुखरता एक प्रमुख बाहरी कारक बन जाता है क्योंकि यह दक्षिण पूर्व एशिया में घरेलू राजनीति में तेजी से मजबूत प्रभाव डाल रहा है।

आतंकवाद और महामारी पर वैश्विक युद्ध

पिछले दो दशकों में दक्षिणपूर्व एशिया में सुरक्षा वातावरण में काफी बदलाव आया है। 1990 के दशक के अंत में, दक्षिणपूर्व एशिया मुख्य रूप से आंतरिक संघर्षों का क्षेत्र था, जिनमें से कुछ मुख्य रूप से भूमि और समुद्री सीमाओं और हित वाले क्षेत्रों पर काफी अधिक थे। हालाँकि, इन आंतरिक संघर्षों और अंतर-राज्य तनावों को हल करने की प्रक्रियाएं चल रही थी और कई ने वादा भी दिखाया। 2000 के दशक के प्रारंभ तक यह क्षेत्र 1997-1998 के वित्तीय संकट से उबरने के बाद एक शांतिपूर्ण भविष्य की ओर बढ़ रहा था। इसके अलावा, 2001 में सुरक्षा मामलों पर अन्य राज्यों और अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के साथ और अधिक जुड़कर यह क्षेत्र एक परमाणु हथियार मुक्त क्षेत्र बन गया। [117] तब से स्थिति बहुत बिगड़ गई है जिसका श्रेय आतंक के खिलाफ वैश्विक युद्ध के परिणामों को दिया जा सकता है। इसके परिणामों को दक्षिण पूर्व एशिया में सबसे गंभीर रूप से महसूस किया गया है, जो सितंबर 2001 में न्यूयॉर्क पर आतंकवादी हमलों के बाद हुआ था और वाशिंगटन भी ऐसी ही घटना का गवाह रहा है। 2001 के उत्तरार्ध तक, वैश्विक 'आतंकवाद के खिलाफ युद्ध' ने एशियाई मोर्चा खोल दिया था और दक्षिण पूर्व एशिया इसका केंद्र था। 'आतंकवाद के खिलाफ युद्ध' और 'हमारे साथ या हमारे खिलाफ' दृष्टिकोण ने दक्षिण पूर्व एशिया में, विभिन्न सामाजिक और धार्मिक इतिहासों के कारण समरसता में पहले से मौजूद अंतर को और बड़ा कर राजनीतिक अभिजात वर्ग और समुदायों, दोनों का ध्रुवीकरण किया।[118]

दक्षिणपूर्व एशियाई देशों की सरकारों द्वारा इसके मोर्चे को खोलने से उनकी धरती पर विदेशी सैन्य बलों की काली छाया, व्यापारिक विश्वास में कमी आई और राजनीतिक उथल-पुथल मच गई। राजनीतिक मोर्चे पर, यह देखते हुए कि दक्षिण पूर्व एशिया में सबसे अधिक मुस्लिम आबादी है, वैश्विक 'आतंकवाद के खिलाफ युद्ध' ने मुस्लिमों और गैर-मुस्लिमों के बीच खाई बना दी। हालांकि हिंसा करने वालों की संख्या बहुत कम थी, फिर भी बड़ी संख्या में लोग परिणामी राजनीतिक और सभ्यतागत वर्गीकर से प्रभावित हो रहे हैं।[119] मलेशिया में, जो जातीयता के आधार पर विभाजित है, इसकी स्वतंत्रता के बाद से ही वहां इस्लामवादियों और धर्मनिरपेक्षतावादियों के बीच अंतर रहा है। इंडोनेशिया में, अमेरिका के लिए जनता गुस्सा प्रॉस्पेरस जस्टिस पार्टी (पीकेएस) जैसी मुख्यधारा की इस्लामी पार्टियों की मदद कर रहा है। उदाहरण के लिए, 2019 के राष्ट्रपति चुनावों के दौरान, जिसमें प्रभावो के अभियान में जोकोवी को उम्माह (मुस्लिम समुदाय) के दुश्मन के रूप में दिखाया गया था, जोकोवी और प्रभावो के बीच, ध्रुवीकरण बहुत स्पष्ट रहा। इसके बाद जोकोवी और उनके गठबंधन आक्रामक हो गए ते और प्रतिद्वंद्वी खेमे के बारे में ऐसे ही ध्रुवीकरण करने वाले आख्यानों का लाभ उठाया, यह दावा करते हुए कि प्रभावो की जीत इस्लामिक खिलाफत की ओर ले जाएगी और यह कि उनका गठबंधन इंडोनेशिया की बहुलतावादी राष्ट्रीय पहचान के लिए खतरा है।[120]

आतंकवाद और महामारी जैसे अंतरराष्ट्रीय संकट राष्ट्रीय सीमाओं के परे होते हैं और इनमें आंतरिक के साथ-साथ क्षेत्रीय स्थिरता संबंधी चुनौतियां होती हैं। कोविड-19 महामारी के प्रभाव ने दक्षिणपूर्व एशिया में मौजूदा सामाजिक- आर्थिक असमानताओं को और बढ़ा दिया है। मार्च 2022 में एशियन डेवलपमेंट बैंक द्वारा जारी रिपोर्ट के अनुसार, 2021 में कोविड-19 के कारण दक्षिणपूर्व एशिया में 4.7 मिलियन लोग अत्यधिक गरीब वर्ग

की श्रेणी में चले गए, और 9.3 मिलियन लोग बेरोज़गार हो गए।[121] सितंबर 2020 में संयुक्त राष्ट्र महासभा (यूएनजीए) के 75वें सत्र की आम बहस के दौरान, तत्कालीन मलेशियाई पीएम मुहीदीन यासिन ने आतंकवादियों द्वारा कोविड-19 के सामाजिक-आर्थिक प्रभावों के लाभ उठाए जाने की संभावना को देखते हुए दुनिया भर में आतंकवाद के फिर से सिर उठाने की चेतावनी दी थी।[122] आतंकवाद के खतरे ने, महामारी के कारण स्वास्थ्य संकट और अर्थव्यवस्था में गिरावट से निपटने के मुद्दे पर पहले से ही तनावग्रस्त देशों की चिंता को और बढ़ा दिया।

कोविड- 19 महामारी ने चरमपंथियों के लिए अपने प्रचार, दुष्प्रचार और षडयंत्र के सिद्धांतों को आसानी से ऑनलाइन प्रचारित करने की स्थिति पैदा कर दी है। अतिवादियों द्वारा फैलाई जा रही महामारी पर गलत सूचना अभियान सरकारी नीति पर गलत डेटा, कोविड-19 मामलों की संख्या के साथ- साथ मृतकों की संख्या और वायरस के सामुदायिक प्रसार की सीमा पर गलत रिपोर्टिंग पर केंद्रित है। यह चीन के नागरिकों जैसे विशिष्ट समुदायों को दोष देने वाली गलत सूचनाओं के साथ-साथ कलह और अविश्वास के बीज बोने के साथ सामाजिक और राजनीतिक अनिश्चितता का माहौल पैदा कर रहा है।

कोविड-19 महामारी के कारण होने वाली सामाजिक- आर्थिक गिरावट का इंडोनेशिया में जमाह अंशारुद दौला (जेएडी) समेत कट्टरपंथी समूहों द्वार भी लाभ उठाया जा रहा है, जो नए सदस्यों की भर्ती करने और समर्थकों को हिंसा करने के लिए उकसाने के उद्देश्य से कई प्रकार की कहानियों को फैलाने में लगे हुए हैं। वर्ष 2020 में, इंडोनेशिया में कम-से-कम सात हमले और आठ विफल आतंकवादी घटनाएं हुईं। इस्लामिक स्टेट (आईएस) सेंट्रल भी दुनिया भर में अपने सहयोगियों से कोरोना वायरस से निपटने में उलझी सरकारों की स्थिति का लाभ उठाने और हमले करने का आग्रह कर रही है। 2017 में आईएस से जुड़े मरावी घेराबंदी, जिसने देश में मौत और विनाश के निशान छोड़े, के बाद फिलीपींस में बड़ी संख्या में आंतरिक रूप से विस्थापितों (आईडीपी) के रहने की अपर्याप्त स्थिति के साथ- साथ उनके घरों से उन्हें बेदखल किए जाने की शिकायतों को प्रभावी तरीके से दूर किया जाना बाकी है। कोविड-19 और महामारी से निपटने के लिए लागू किए गए लॉकडाउन उपायों ने पुनर्निर्माण के प्रयासों में बाधा डाली है। यह कमजोर लोगों, विशेष रूप से बेरोज़गार युवाओं, में, कट्टरता के जोखिम को बढ़ाता है, क्योंकि यह राजनीतिक हिंसा और सामाजिक अशांति का कारण बन सकता है।[123] थाईलैंड में, महामारी के कारण होने वाले सामाजिक- आर्थिक तनाव ने सत्ता समर्थक खेमे में फूट पैदा कर ध्रुवीकरण की वर्तमान गतिशीलता को बदल दिया है। सार्वजनिक स्वास्थ्य क्षेत्र के प्रणेता, जो परंपरागत रूप से व्यवस्था के कट्टर सहयोगी रहे हैं, ने, स्वास्थ्य संकट से निपटने के विषय पर सरकार की सार्वजनिक रूप से आलोचना की है। थाई सरकार के स्वास्थ्य संकट के खराब प्रबंधन और इसके आर्थिक नतीजों के परिणामस्वरूप सरकार के खिलाफ शिकायतें बढ़ रही हैं।[124]

थाईलैंड के जैसे ही कोविड-19 के प्रसार और उसके बाद की आर्थिक क्षति एवं बढ़ती असमानता ने अन्य दक्षिणपूर्व एशियाई देशों में असंतोष को बढ़ा दिया है। इस क्षेत्र के देशों में सरकार के खिलाफ बड़े पैमाने पर विरोध देखा गया, इसके कारण अगस्त 2021 में मलेशिया की सरकार भी गिर गई; आंशिक रूप से राजनीतिक अंतर्कलह के कारण और स्वास्थ्य संकट के प्रबंधन के संबंध में यहां के नागरिकों के गुस्से के कारण भी। इसलिए, महामारी को नियंत्रित करने में विफलता के साथ- साथ इसके सामाजिक- आर्थिक प्रभाव को सीमित करने में विफलता ने दक्षिणपूर्व एशिया में मौजूदा राजनीतिक व्यवस्था की वैधता को नुकसान पहुंचाया है। यह राजनीतिक परिवर्तन के लिए परिस्थितियां पैदा कर सकता है जहां नेता संविधान में संशोधनों कर सकते हैं और यह उनकी कार्यकारी शक्ति को बढ़ाने में भी मदद कर सकता है।[125]

एक दक्षिण पूर्व एशियाई देश में अस्थिरता और राजनीतिक अव्यवस्था क्षेत्र में कहीं भी केंद्रापसारक ताकतों को मजबूत कर सकती है क्योंकि स्थानीय विद्रोह अब अलग घटना नहीं है। उदाहरण के लिए, आचे में विद्रोह हालांकि स्थानीय स्रोतों द्वारा किया गया है लेकिन यह दक्षिणी थाईलैंड से लेकर दक्षिणी फिलीपींस तक, अलग-अलग गहनता वाले मुस्लिम विद्रोहों की एक श्रृंखला से संबंधित है। ये उग्रवाद इन देशों में सीमांत आबादी की सामाजिक- आर्थिक एवं राजनीतिक शिकायतों से प्रेरित होते हैं जो 9/11 के बाद से बढ़ रहे हैं और महामारी के बाद की अवधि में और तेज हो सकते हैं।[126]

निष्कर्ष

इन देशों में पिछले कुछ दशकों के राजनीतिक माहौल का अध्ययन करके यह कहा जा सकता है कि दक्षिणपूर्व एशिया में लोकतांत्रिक मज़बूती प्रगति जारी है। वर्तमान सामाजिक- आर्थिक ढांचे, जनसांख्यिकीय विविधताओं के साथ- साथ नई सुरक्षा वास्तविकताओं को अपनाते हुए स्वयं के अद्वितीय मूल्यों, परंपराओं और रीति-रिवाजों को प्रबंधित करने की आवश्यकता ने दक्षिणपूर्व एशिया में उभरती राजनीतिक व्यवस्था को आकार देना जारी रखा है। 20वीं सदी के आखिर तक दक्षिणपूर्व एशिया में, विश्व के अन्य देशों के जैसे ही लोकतंत्रीकरण की लहर पकड़ रही थी और इसके कारण ही लोकतांत्रिक सुधार हुए। दक्षिणपूर्व एशिया में इन परिवर्तनों ने न केवल लोकतंत्र की स्थापना की है बल्कि इस क्षेत्र में खुलेपन को बढ़ावा दिया है जैसा कि आसियान के माध्यम से नियामक समीक्षा को मजबूत करने में मदद मिली है।

हालाँकि, पिछले दो दशकों में दक्षिणपूर्व एशिया के राजनीतिक माहौल में काफी बदलाव आया है। दक्षिणपूर्व एशिया के कुछ देशों में हाल की राजनीतिक घटनाओं से पता चलता है कि राजनीतिक स्थिरता को हल्के में नहीं लिया जा सकता है। कम्बोडिया में बढ़ते लोकतंत्र विरोधी रुझानों के साथ-साथ जातीय, धार्मिक और वैचारिक आधार पर बढ़ते ध्रुवीकरण के लिए एक लोकतांत्रिक रूप से चुनी गई सरकार को सत्ता से बेदखल होते देखने वाले म्यांमार ने दक्षिणपूर्व एशिया में लोकतांत्रिक परिवर्तनों की प्रकृति और प्रक्षेपवक्र पर सवाल उठाए हैं। इन राजनीतिक घटनाक्रमों के परिणामस्वरूप वर्तमान राजनीतिक व्यवस्थाओं, इसके नेताओं और सर्वसम्मति से चुने गए नेताओं के बीच सत्तावादी शासन की प्रवृत्ति के साथ जनता का विश्वास कम हो रहा है।

यह देखते हुए कि दक्षिणपूर्व एशिया की राजनीति काफी समय से और व्यापक क्षेत्रीय एवं वैश्विक विकास की बात जारी रखे हुए है, उभरते राजनीतिक रुझानों को आंतरिक और बाह्य, दोनों तरह से बढ़ती सुरक्षा चिंताओं के लिए भी जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। हालांकि एससीएस के लगभग पूरे क्षेत्र पर चीन का अटल दावा दक्षिण पूर्व एशिया में घरेलू राजनीति की रूपरेखा को फिर से आकार दे रहा है, अमेरिका-नीत आतंकवाद के खिलाफ विश्व युद्ध, जिसमें इस्लामी कट्टरवाद के बारे में आशंकाओं को बढ़ा दिया है, धार्मिक ध्रुवीकरण को बढ़ावा दे रहा है। चूंकि राजनीतिक अस्थिरता अव्यवस्थाओं को बढ़ावा देती है और आंतरिक संकट को गहराती है, यह सामाजिक स्थिरता और राजनीतिक सामंजस्य को जारी रखेगा जो आर्थिक और सामाजिक विकास की आवश्यक शर्तें हैं। यह संदेह और अनिश्चितता लाता है क्योंकि दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों में से कुछ जो परिवर्तन कर रहे हैं, लोकतांत्रिक समेकन की दिशा में राजनीतिक परिवर्तन की प्रक्रिया को जारी रखने की क्षमता रखते हैं।